पुण्य-स्मृति-अङ्क

कौल-कल्पतरु
चण्डी

'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल
'राष्ट्र-गुरु' परम पूज्य स्वामी जी महाराज

की अनन्य भक्त

कुलानन्द-मयी देव्यम्बा
श्रीमती उमादेवी शुक्ला

पुण्य तिथि
ज्येष्ठ कृष्णा १३ (वट-सावित्री-व्रत)

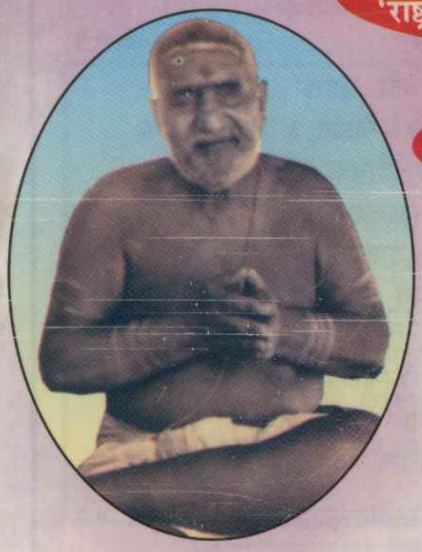

माता, पिता, गुरु और गुरु-पत्नी–इन चार श्रेणियों में बँटे लोगों का 'जनन-दिवस' एवं परमेश्वर-सायुज्य-रूप 'मरण-दिवस'–दोनों 'पर्व' के रूप में मनाए जाते हैं। इन दिनों पुत्र अथवा शिष्य को आन्तरिक याग-योग में रत होना चाहिए। माँ, गुरु-पत्नी के प्रति श्रद्धा प्रवाहित करने के लिए 'इड़ा' का 'श्वास'-चक्र चलाकर उनके श्री-चरणों का ध्यान करना चाहिए। पिता और गुरु के सम्बन्ध में 'पिङ्गला' को प्रवाहित करना चाहिए।

सूचना

'चण्डी' का ६३वाँ वर्ष (अप्रैल, २००४ से मार्च २००५)

- 'चण्डी' के ६३वें वर्ष में ६ **सामान्य अङ्क** + ६ **विशिष्ट अङ्क**—कुल १२ अङ्क प्रकाशित होंगे।
- 'चण्डी' **वर्ष ६३** के **सामान्य अङ्क + विशिष्ट अङ्क** सभी पाठकों की सेवा में **४०.०० रु० की वी०पी०** द्वारा भेजे जाएँगे। इस प्रकार कुल **छः वी०पी०** भेजी जाएँगी।
- जो बन्धु **वी०पी०** द्वारा अङ्क मँगाना न चाहते हों, वे पत्र द्वारा हमें इसकी सूचना देकर **रजिस्ट्री** द्वारा मँगा सकते हैं।
- जो बन्धु **विशिष्ट अङ्क** मँगाना न चाहते हों, वे ६ **सामान्य अङ्क** साधारण डाक से १००.०० रु० भेजकर मँगा सकते हैं।

विशेष जानकारी के लिए कृपया निम्न पते पर सम्पर्क करें—**व्यवस्थापक श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग - २११००६**

- मानद सम्पादक
  रमादत्त शुक्ल
- सम्पादक
  ऋतशील शर्मा
- अनुदान
  सामान्य अङ्क : रु० १५/-
  विशिष्ट अङ्क : रु० २५/-
- मुद्रक
  परा-वाणी प्रेस, प्रयाग - ६

विशेष

- 'चण्डी' **वर्ष ६३ अङ्क २-३** (जून-जुलाई, २००४) + **विशिष्ट अङ्क** (दश-महा-विद्या-कवच) सभी पाठकों की सेवा में **२६ जुलाई, २००४** को भेजा जाएगा।
- **मन्त्रात्मक सप्तशती** का अन्तिम **भाग ५, १०-१५ जुलाई, २००४** को भेजा जाएगा।

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

चैत्र-वैशाख, २०६१ वि० (अप्रैल-मई, २००४)

इस अङ्क में

(१) **श्रद्धाञ्जलि** १

(२) **मेरी छोटी 'गुरु-भाभी' की अन्तिम विदाई** १

(३) **अम्बे मेरी!** २

(४) **'शक्ति'-तत्त्व** ३-११

[१ 'ब्रह्म' और 'शक्ति', २ 'अथर्व'-वेदोक्त 'शक्ति'-विज्ञान, ३ 'विद्युत्'-शक्ति के भौतिक, दैविक एवं आध्यात्मिक रूप, ४ तन्त्रोक्त 'शक्ति'-विज्ञान, ५ 'शक्ति'-उपासना का परम लक्ष्य 'अद्वैत'-तत्त्व, ६ 'श्रीपरा-शक्ति' का सर्वोत्कृष्ट, सर्व-व्यापक, सर्व-कल्याणकारी स्वरूप, ७ वैदिक साहित्य में 'देवी' या 'शक्ति'-शब्द का प्रयोग, ८ सप्तशती एवं वेदोक्त 'शक्ति'-तत्त्व]

(५) **तुलसी घ्राण-मात्रेण क्रुद्धा भवति चण्डिका** १२

(६) **साधन-माला** १५-२४

१ 'साधना'-योग्य शरीर हेतु अनुभूत प्रयोग
२ नित्य-कर्म
३ शान्ति-कर्म
४ योग्य वर-प्राप्ति का प्रयोग
५ सन्तान-प्राप्ति-प्रयोग
६ गप-शप-विष-हर प्रयोग
७ दीर्घ आयु, सुख-शान्ति हेतु प्रयोग
८ परीक्षा में सफलता, स्मरण-शक्ति-वर्द्धन प्रयोग
९ अनावृष्टि-निवारक प्रयोग
१० अभया अपराजिता
११ अभीष्ट फल-दायक सदा-शिव-कवच

(७) **श्रद्धा-सुमन** (आवरण-पृष्ठ ८३)

(८) **विशेष प्रस्तुति : 'लघु-चण्डी'** १-३२

६२ वर्षों से प्रकाशित

'कौल-कल्पतरु'

चण्डी

सम्पादक :: रमादत्त शुक्ल, ऋतशील शर्मा

वर्ष ६३ :: चैत्र-वैशाख, 'हेमलम्ब' संवत् २०६१ वि० – अप्रैल-मई, २००४ :: संख्या १-२

श्रद्धाञ्जलि

अत्यन्त दु:ख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि '**चण्डी**'-परिवार की परम शुभैषी मेरी माता **श्रीमती उमादेवी शुक्ला (धर्म-पत्नी पण्डित रमादत्त शुक्ल)** अब इस नश्वर संसार में नहीं हैं। आपका '**मणिपुर**'-**वास** लगभग ८० वर्ष की आयु में अचानक १७ मई, २००४ को मध्याह्न-काल में '**श्री चण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज** में हुआ। आपके द्वारा जिन स्नेह-मय भावों से '**चण्डी**'-परिवार की आजीवन सहायता हुई है, वे **प्रेरणा-दीप** बनकर भविष्य में भी हमारा पथ-प्रदर्शन करेंगे—ऐसा हमारा विश्वास है। हम यहाँ आपके प्रति कोटि-कोटि श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं।

—ऋतशील शर्मा

मेरी छोटी 'गुरु-भाभी' की अन्तिम विदाई!

*** परम पूज्या श्रीमती अन्नपूर्णा काटजू, संस्थापक अध्यक्षा अखिल भारतीय शाक्त सम्मेलन, प्रयाग**

मन दु:ख से भरा है। क्या लिखूँ? क्या गोपनीय रखूँ? समझ में नहीं आता!

'भाभी' के व्यक्तित्व व कृतित्व पर दृष्टि डालती हूँ, तो पाती हूँ कि वे सद्-गुणों का भण्डार थीं। अथाह समुद्र थीं, जिन्होंने गृहस्थी के हर कष्ट को—हर पहलू का साहस-पूर्ण सामना किया और सहा। वे इतनी कर्त्तव्य-परायणा देवी-तुल्य थीं कि लेखनी को शब्द नहीं मिलते हैं। बड़ों का आदर-सम्मान-आज्ञा को शिरोधार्य करना, अतिथि का सत्कार—उसे देव-तुल्य समझना, छोटों का भी मान रखना—उन्हें प्रसन्नता प्रदान करना—ऐसा था, मेरी भाभी का चरित्र! वे तो एक आदर्श-वादी, महान् महिला थीं।

इस समय एक बात स्मरण में आती है। एक व्यक्ति के छोटे भाई का स्वर्ग-वास हो गया था। वे बड़े दु:खी थे। दु:खी होना स्वाभाविक था। एक सन्त ने उन्हें समझाया कि—"संसार का यही नियम है। आवागमन चलता ही रहता है। शोक करना व्यर्थ है।" इस पर उस व्यक्ति ने कहा—"आप सत्य कह रहे हैं। आप सन्त, त्यागी,

प्रकाशक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

'श्रीचण्डी-धाम', प्रयाग-राज (उ०प्र०)–२११००६ अनुदान १५/-

विरक्त प्राणी हैं; माया-मोह से परे हैं, पर हम गृहस्थ हैं। हमारे हृदय से पूछिए कि हमारे हृदय को कितना आघात पहुँचा है। हृदय के टुकड़े-टुकड़े हुए जाते हैं, उसको कैसे समझाएँ? आप एक त्यागी होने के नाते इसे कदापि अनुभव नहीं कर सकते।''

बात दोनों की सत्य है। अपने से बड़ा दिवङ्गत होता है, तब भी चोट तो लगती ही है, पर जब अपने से छोटा सामने से चला जाए, वह दु:ख तो असहनीय हो जाता है। फिर भी हमारा कुछ वश नहीं। प्रभु की इच्छा को स्वीकार करना ही होता है।

थोड़े से ये सुन्दर, सुवासित, सुगन्धित पुष्प—उस महान् आत्मा को अन्तिम बेला के अवसर पर समर्पित कर रही हूँ। इन्हें आप केवल पुष्प ही न समझिएगा। ये तो मेरी भाभी के उज्ज्वल चरित्र, अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठा का छोटा-सा एक प्रतिबिम्ब है।

मैंने एक ऐसी महिला को खो दिया, जिसकी पूर्ति सम्भव नहीं।

मन में बड़ा तूफान उठा हुआ है! वह किसी प्रकार स्वीकार नहीं करता कि उनसे अब मिलन नहीं होगा!

अन्त में उस महानतम् 'आत्मा' को दु:ख-भरे हृदय से विदा देती हूँ। भगवान् उनको शान्ति व हम सब परिवार को सन्तोष दे। उनकी 'फुलवारी' सदा इन 'श्रद्धा-पुष्पों' की भाँति महकती—फलती-फूलती रहे।

प्रभु से मेरी प्रार्थना है कि ये सुन्दर, सुगन्धित, हृदय को मोह लेनेवाले 'पुष्प', जो उनके आदर्श चरित्र के द्योतक हैं, बच्चों को 'प्रेरणा का स्रोत' बनें। खुले हाथ की भाँति न होकर, मुट्ठी की भाँति सङ्गठित होकर रहें।

—अन्नपूर्णा काटजू

अम्बे मेरी!

मेरी छोटी-सी अञ्जलि में—
हैं श्रद्धा के दो-चार सुमन!
अर्पित कर श्री-चरणों में—
करता हूँ तेरा नमो नमन!!

तुम मूल 'प्रकृति', तुम 'उमा'-मूर्ति!
महिमा-गरिमा तेरी अपार!
तुम 'हिम-गिरि' की उत्तुङ्ग शिखा—
तुम प्राण-वायु-सम चिर उदार!!

जग-अङ्कस्था 'गिरिजा'-सी तुम—
चिर स्नेह-मयी, वात्सल्य-मयी!
तुम 'गङ्गा'-जल पावन पुनीत—
कल्याण-वृष्टि वर-दान-मयी।।

'कुल' धन्य हुआ 'आनन्द-मयी'!
'देवी' के पावन दर्शन से!
अम्बे! तुमने जगा दिया—
कुण्डलिनी को निज स्पर्शन से!

'चण्डी'-मण्डल की 'प्राण-शक्ति'—
सिद्धि-प्रदा तुम सिद्धि-मयी!
वैराग्य-मूर्ति तुम तपो-मूर्ति—
'ऋत'-सम्पन्ना तुम 'ऋद्धि-मयी'!!

है 'चरित' तुम्हारा 'महा-काव्य'
बस, 'मुक्तक' तक है 'गति' मेरी—
कुछ 'श्रद्धा-छन्द' समर्पित हैं—
स्वीकार करो अम्बे! मेरी!!

❋

निवेदक : पण्डित मधुसूदनप्रसाद शुक्ल

'राष्ट्र-गुरु' परम पूज्य स्वामी जी महाराज की पावन पुण्य-तिथि पर :

'शक्ति'-तत्त्व

('राष्ट्र-गुरु' परम पूज्य स्वामी जी महाराज द्वारा 'शक्ति'-विज्ञान-विषयक रहस्योद्घाटन)

❋

'ब्रह्म' और 'शक्ति'

'शक्ति'-तत्त्व की उपासना अनादि-काल से ही संसार में होती आ रही है। लौकिक और पारमार्थिक दोनों विषयों की सिद्धि इससे होती है, इसीलिए आर्य-जनता सनातन काल से ही **बल, ऐश्वर्य, ज्ञान, सौन्दर्य, निःश्रेयस** आदि तत्त्वों को अपने धर्म तथा समाज के अङ्ग-रूप में मानती आ रही है। ये सारी वस्तुएँ **'शक्ति'-तत्त्व** के ही रूपान्तर हैं। उपनिषदों में जिसे **'ब्रह्म'** कहा गया है, वह **'शक्ति'** का अभिन्न रूपान्तर ही है। इसीलिए **श्री आचार्य भगवत्-पाद** ने **'सौन्दर्य-लहरी'** में कहा है—

शिवः शक्त्या युक्तो यदि, भवति शक्तः प्रभवितुम्।
न चेदेवं देवः न खलु, कुशलः स्पन्दितुमपि॥

अर्थात् **'ब्रह्म'** तभी कार्य करने में समर्थ है, जब वह **'शक्ति'** से युक्त होता है, अन्यथा वह कुछ भी नहीं कर सकता। अनुभव से भी यह बात प्रत्यक्ष है कि **शक्ति-मान्** ही कोई भी कार्य कर सकता है। संसार के इतिहास से भी यह प्रकट है कि सदैव शक्ति-शालियों का ही जगत् में बोल-बाला रहा है। आर्य-जाति ने अतीत में जो कुछ भी **ऐश्वर्य, ज्ञान, यश** आदि की उन्नति की थी, उसका मूल कारण **'शक्ति'-तत्त्व की उपासना** ही है क्योंकि बिना **'शक्ति'** के ये सब असम्भव हैं।

संसार के सबसे प्राचीन **वैदिक ग्रन्थों** के अवलोकन से भी यह बात पुष्ट होती है, जिनका उद्धरण आगे दिया जाएगा। **वैदिक साहित्य** में भी सबसे प्राचीन **संहिता-ग्रन्थों** में अनेक मन्त्रों में **'शक्ति'-तत्त्व का रहस्य** कहा गया है। **'देवी-सूक्त', 'रात्रि-सूक्त'** और **'सरस्वती-सूक्त'** तो प्रसिद्ध ही हैं। आज **'अथर्व-वेद'** के **प्रथम-काण्ड के १३वें सूक्त** पर ही कुछ निवेदन करते हैं, जिससे **शक्ति-विषयक ईश्वरीय आदेशों का रहस्य** हृदयङ्गम किया जा सकता है।

'अथर्व'-वेदोक्त 'शक्ति'-विज्ञान

'अथर्व'-वेद के प्रथम-काण्ड के १३वें सूक्त में चार मन्त्र हैं। **'भृगु आङ्गिरस'** इसके **'ऋषि'** हैं और **'विद्युत् देवता'** हैं। इस **'विद्युत'-तत्त्व** के दृष्टा या आविष्कारक **भृगु मुनि** की शक्ति का उदाहरण **महा-भारत, पुराणादि ग्रन्थों** में जिस तरह बताया गया है, उस तरह का कोई दूसरा उदाहरण आर्य-ग्रन्थों में नहीं मिलता। वे इतने शक्ति-शाली थे कि उन्होंने **ब्रह्मा, विष्णु** और **महेश** की भी परीक्षा ली थी और **विष्णु** को भी लात मारी थी।

'यजुर्वेद' (अ० १-१८) में **भृगु आङ्गिरस** के विषय में कहा है—**भृगूणामाङ्गिरसां तपसा तप्यध्वम्'**

अर्थात् अङ्गिरा - गोत्रवाले भृगुओं के तेज से तेजस्वी होओ। इसी के अनुसार '**शतपथ ब्राह्मण**' भी कहता है—'**इत्येतद् वै तेजिष्ठं तेजो यद् भृग्वङ्गिरसाम्**' अर्थात् भृगु आङ्गिरसों का ही यह सर्व-श्रेष्ठ तेज है। '**गोपथ-ब्राह्मण**' (३-४) में '**एतद् वै भूयिष्ठं ब्रह्म, यद् भृग्वङ्गिरसाम्**' कहा गया है। यह सब महत्त्व '**शक्ति**' का ही है।

'**ऋषयो मन्त्र-द्रष्टारः**' के अनुसार उक्त **शक्ति-शाली भृगु अङ्गिरा मुनि** १३वें रहस्य-मय सूक्त के **ऋषि** हैं। उन्होंने ही इस अनादि '**शक्ति-विज्ञान**' को जगत् के सम्मुख प्रकट किया है। '**विद्युत्**' इस सूक्त का प्रतिपाद्य '**देवता**'-रूप '**शक्ति-पदार्थ**' है। '**द्युत् दीप्तौ**'—धातु से क्विप् प्रत्यय होकर कर्त्रर्थक दीप्ति, प्रकाश आदि अर्थों की सिद्धि होकर '**विद्युत्**' का स्पष्ट अर्थ यह है कि '**विद्युत्**' सबकी प्रकाशक है और स्व-स्व-कार्य-कारण में समस्त पदार्थों को वह योग्यता प्रदान कर रही है।

आजकल **पाश्चात्य विज्ञान** के प्रचार से **बिजली-तत्त्व** का जो प्रचार एवं उपयोग हो रहा है, वह इसका **स्थूल-रूप** ही है। **शुद्ध चेतन-रूप**, जो सारे जगत् का नियामक है, इससे परे है। वही इस '**सूक्त**' का प्रतिपाद्य है। उसे ही दार्शनिक ग्रन्थों में **सच्चिदानन्द-रूपिणी** बताया गया है। वही '**ब्रह्म**'-**तत्त्व** है। यह भाव **१३वें सूक्त** के अक्षरों पर ध्यान देने से प्रकट होता है, जिसका पहला मन्त्र इस प्रकार है—

नमस्ते अस्तु विद्युते, नमस्ते स्तनयित्नवे। नमस्ते अस्त्वश्मने, येनादूडाशे अस्यसि॥१॥

अर्थात् **हे प्रकाश-रूपवाली देवि, विद्युत् शक्ति-रूपे! तुझे नमस्कार है। शब्द-रूप से गर्जना करनेवाली तुझे नमस्कार है। अश्म वज्र भी तेरा रूप है, अतः उसे नमस्कार है, जिससे तू हमारे क्लेशों को नष्ट करती है।**

'**विद्युत्**'-शक्ति के भौतिक, दैविक एवं आध्यात्मिक रूप

बिजली का मुख्य सम्बन्ध '**जल**' से है। उसका कारण-रूप '**मेघ**' है। उसमें बिजली की चमक, गर्जना तथा वज्र-पात—तीनों होते हैं। ये तीनों '**विद्युत्**'-**शक्ति के भौतिक रूप** हैं। जगत् के व्यवहार में इन तीनों चीजों का उपयोग करके आज **भौतिक विज्ञान** अनेक चामत्कारिक दृश्य नित्य नए रूप में दिखा रहा है, परन्तु इससे केवल **ऐहिक लाभ** ही सब लोग उठा सकते हैं, **मानसिक** या **आध्यात्मिक उन्नति** में इसका कोई साक्षात् उपयोग नहीं है, इसलिए इसे मनुष्य-जीवन का लक्ष्य माननेवाले पाश्चात्य समाज का विनाशोन्मुख प्रवाह हो रहा है।

'**एलेक्ट्रॉन-प्रोटॉन**' और '**न्युट्रॉन**'—इन दो प्रकार की बिजलियों से सारे पार्थिव पदार्थों की सृष्टि हुई है। पृथ्वी का यह वर्तमान रूप इन्हीं दोनों विद्युतों के योग का परिणाम है। यह साइन्स-वेत्ताओं का मत है। इसी से मिलता-जुलता **वैदिक सिद्धान्त** भी है—'**इयं वै पृथिवी भूतस्य प्रथमजा।**' (शतपथ ब्राह्मण—१४-१-२-१०)

अर्थात् '**भूत**'—**भौतिक सृष्टि के पहले यह** '**पृथिवी**' **ही उत्पन्न हुई।** विद्युत् के विषय में उक्त मन्त्र में जितने शब्द आए हैं, उनकी निरुक्ति वैदिक ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है। यथा—

विद्युत्-'शक्तिः' तान् देवान् व्यद्यत् पापनः सकाशात् वियोगितवान् यद् विद्युत्, तस्माद् विद्युत्।

अर्थात् देवताओं को पापों से छुड़ाने के कारण उसका नाम '**विद्युत्**' हुआ। ('तैत्तिरीय उपनिषद्', ३-१०-९-११)। '**विद्युद् ब्रह्मेत्याहुः**' (श० ६-१-३-१४)—विद्युत् ही ब्रह्म है। '**विद्युद् वाऽशनिः**' (श० ६-१-३-१४)—बिजली ही वज्र है। '**विद्युद् वाऽपां ज्योतिः**' (यजुर्वेद १३-१५)—बिजली ही जल की ज्योति है। '**वृष्टिर्वै याज्या विद्युदेव, विद्युद् हि इदं वृष्टिमन्नाद्यं सम्प्रयच्छति**' (ऐतरेय उपनिषद्, २-४१)। अर्थात् समस्त जल-करणों का एकीभाव ही बिजली है; बिजली ही वृष्टि-अन्नादि को पुष्टि भी प्रदान करती है। '**यो विद्युति पुरुषः,**

स सर्व-रूपः सर्वाणि ह्येतस्मिन् रूपाणि' (ऐ० ४-१) अर्थात् बिजली में वह 'पुरुष' है। उसी के ये सब रूप हैं। उसी में ये सब रूप रहते हैं।

बिजली में '**गति**' है। जहाँ '**गति**' है, वहाँ '**शब्द**' का रहना या होना नियम-सिद्ध है। '**शब्द**' ही '**वज्र**' है या उसकी अभिन्न शक्ति ही '**वज्र**' कहलाती है, जिसे कहा गया है—'**वज्र एव वाक्**' (ऐ० २-२१), '**वाग्धि वज्रः**' (ऐ० ४-१)। **महर्षि पतञ्जलि** महा-भाष्य में कहते हैं—'**स वाग् वज्रो यजमानं हिनस्ति**' अर्थात् वह वाणी वज्र होकर यजमान का विनाश कर देती है।

उक्त प्रमाणों पर विचार करने से '**विद्युत् शक्ति**' के **भौतिक, दैविक एवं आध्यात्मिक रूपों का रहस्य** स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाता है।

महर्षि यास्क का मत है कि प्रत्येक वैदिक मन्त्र का अर्थ भौतिक, दैविक एवं आध्यात्मिक—इन तीन रूपों में वैदिकों को जानना चाहिए—'**यत्-काम ऋषिर्यस्यां देवतायामार्थपत्यमिच्छन् स्तुतिं प्रयुक्ते, तद्-दैवतो स-मन्त्रो भवति। तास्त्रि-विधः—परोक्ष-कृताः, प्रत्यक्ष-कृताः आध्यात्मिक्यश्च**' (नि०, ७-१) अर्थात् जिस अर्थ की इच्छा से ऋषि जिस देवता की स्तुति करता है, वह 'मन्त्र' उस देवता का होता है। उसके तीन भेद हैं—**१. परोक्ष, २. प्रत्यक्ष** और **३. आध्यात्मिक।**

अन्य पुरुष की अपेक्षा से जो वर्णन होता है, उसे '**परोक्ष**', **मध्यम** पुरुष (तुम) की अपेक्षावाले को '**प्रत्यक्ष**' तथा मैं (अहम्) रूप से तादात्म्य करके बतलानेवाले मन्त्रों को '**आध्यात्मिक**' कहते हैं। इस नियमानुसार सूक्त की यह ऋचा '**प्रत्यक्ष**'-**कृत** है। ऋषि '**प्रत्यक्ष**'-**रूप** में उस **महा-शक्ति का वर्णन** कर रहे हैं।

वेदान्त-शास्त्र में 'अन्य पुरुष' का अन्तर्भाव 'मध्यम' तथा 'उत्तम पुरुष' में किया जाता है। '**युष्मदस्मद्-गोचरयोः**' इत्यादि भाष्य में **श्री शङ्कराचार्य** ने '**अहम्**' और '**त्वम्**' को ही निकट-सम्बन्धी माना है। इनमें भी '**अहम्**' ही मुख्य है। '**तुम**' का व्यवहार भी कल्पित है, क्योंकि व्यवहार-काल में '**तुम**' का उपयोग मानकर भी अपने को सब कोई '**मैं**' ही कहते हैं। इसलिए '**तुम**' का व्यवहार कल्पित ही है, क्योंकि **भेद**—'**मायिक**' है और **भेद-कृत समस्त वर्णन**—'**मायिक**' है। **परमार्थ**—'**आध्यात्मिक**' वर्णन है। 'परोक्ष', 'प्रत्यक्ष' वर्णनों का अभिप्राय '**अध्यात्म-वाद**' में तात्पर्य रखता है।

महर्षि व्यास भी '**तत्त् समन्वयात्**' (वे०द० १-४-४) इस सूत्र से समस्त वैदिक वाक्यों का तात्पर्य ऐसा ही मानते हैं। **महर्षि यास्क** ने '**अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि**'—इस '**देवी-सूक्त**' को आध्यात्मिक अर्थ में ही बताया है। अतः '**अध्यात्म-वाद**' की अपेक्षा से इस मन्त्र का '**आध्यात्मिक**' अर्थ इस प्रकार लगाया जा सकता है (दैविक अर्थ अध्यात्म-वाद के ही अन्तर्गत है)—"**हे देवि! विद्युत्-रूपे, मूलाधार चक्र में सार्ध-त्रिवलय-रूप से रहनेवाली! तुझे नमस्कार है। ध्वनि-वर्ण-रूप से गर्जना करनेवाली! तुझे नमस्कार है। स्वाधिष्ठान आदि चक्रों के भेदन में वज्र का कार्य करनेवाली! तुझे नमस्कार है!**"

उक्त तीनों कार्यों की सिद्धि '**शक्ति**' से ही होती है, जिसे **तन्त्र**-शास्त्राभ्यासी साधक अच्छी तरह जानते हैं। इनके सु-सम्पन्न होने पर सभी साधकों के कष्ट (पाप) निवृत्त हो जाते हैं। इसीलिए ऋषि कहते हैं—'**येना दूडाशे अस्यसि**' अर्थात् हमारे (साधकों के) सभी क्लेशों को दूर करती है।

तन्त्रोक्त 'शक्ति'-विज्ञान

'**शक्ति-पदार्थ**' का विशद रूप में निरूपण करनेवाले **तन्त्र-ग्रन्थों** में **भगवान् शिव** ने बताया है कि '**मूलाधार चक्र में सोए हुए सर्प के आकार में सार्ध-त्रिवलय-रूप में इस जगत् का अभिन्न-निमित्तोपादान-**

कारण 'शक्ति-तत्त्व' है, जो आन्तरिक साधन से जाग्रत् होता है।' उक्त मन्त्र के वर्णन के ही अनुसार तान्त्रिक साधना में **'शक्ति-पदार्थ'** का वर्णन किया गया है। **'त्रिपुरा-सार-समुच्चय'** (४ प-११) में कहा गया है—

शक्तिः कुण्डलिनीति या निगदिता आईम संज्ञा जगन्, निर्माणे सततोद्यता प्रविलसत् सौदामिनी-सन्निभा।
शङ्खावर्त-निभां प्रसुप्त-भुजगाकारां जगन्मोहिनीम्, तन्मध्ये परिभावयेद् विस-लता - तन्तूपमेयाकृतिम्॥
हूङ्कारेण गुरूपदिष्ट - विधिना प्रोत्थाप्य सुप्तां ततः, कृत्वा तां कलया तया परमया चिद्-रूपया सङ्गताम्।
माया कुण्डलिनीं समाहित-मनास्तामुच्चरेत् कौशिकीम्, शक्तिं ब्रह्म - महा-पथेन सहितामाधारतः स्वात्मना॥

अर्थात् **'आईम'** संज्ञा-वाली, जगद्-रचना में सततोद्यत, चमकती हुई बिजली के सदृश, शङ्ख के मुख के समान आवर्त (चक्करदार) सदृश, सोए हुए सर्प के समान, सारे जगत् को मुग्ध करनेवाली, विस-तन्तु के सदृश **'कुण्डलिनी'**-शक्ति मानी गई है। गुरूपदिष्ट रीति से **'हूं'**—वीजाभ्यास द्वारा **सोई हुई कुण्डलिनी** को उठाकर **परम चित्-कला** से उसका योग करके **आधार-पद्म** से लेकर **'सहस्रार'**-पर्यन्त समस्त **षट्-चक्रों** का समाहित मन द्वारा अनुभव करना चाहिए।

उक्त मार्ग में ही **'शब्द'** या **'नाद'** का भी अनुभव साधकों को होता है। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

आदौ मत्तालि - माला गल-पथ-विगलत्-तार-झङ्कार-हारी,
नादोऽसौ वंशि-कांस्यानिल-भरित-लसद्-वंश-निस्वान-तुल्यः।
घण्टा-नादानुकारी तदनु-जल-निधि-ध्वान-धीरो गभीरो,
गर्ज पर्जन्य-घोषः पर इह कुहरे वर्तते ब्रह्म-नाड्याः॥

अर्थात् पहले मत्त **'भृङ्ग'** की गुञ्जार होती है। बाद में **'वेणु'** की मधुर ध्वनि सुनाई देती है। तत्पश्चात् **'घण्टा-नाद'** समुद्र की ध्वनि सदृश सुनाई देता है। यह सब घोष **'ब्रह्म-नाड़ी'** में सुनाई देता है। **नौ नादों** तथा **वर्णों** की भी उत्पत्ति तन्त्रों में **'कुण्डलिनी'** के जागने पर ही मानी जाती है। **'कुण्डलिनी'** का यह रहस्य **षट्-चक्रों** के सहित **'वेद'** में भी माना गया है—

गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षती एक-पदी, द्विपदी सा चतुष्पदी नव-पदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् (ऋग्वेद-संहिता, १-१ : ४-४९)

अर्थात् गौरी-वाक् **'कुण्डलिनी'-महा-शक्ति** जलों को तोड़ती हुई (जल से पञ्च-तत्त्वों का उपलक्षण है, जो **षट्-चक्रों** में चिन्तित होते हैं। तोड़ने से वज्र-पात गृहीत होता है। इस प्रकार **'तक्षू-तन्-करणे'** का अर्थ सङ्गत होता है)। एक-पदी **'ॐ'**, द्वि-पदी **'सोऽहम् सा ॐ'**, चतुष्पदी **'ॐ भूर्भुवः स्वः'**, अष्ट-पदी **'अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग'** तथा नव-पदी **नव-नादवाली** है। **'सहस्रार'** में **सहस्राक्षरवाली** भी हो जाती है।

यह रहस्य **तन्त्र-वेत्ता योगियों** को भली-भाँति विदित है। यहाँ इसे लिखने का अभिप्राय यह है कि **'सूक्त'** के प्रथम मन्त्र में **'विद्युते, स्तनयित्नवे, अश्मने'** इन शब्दों द्वारा तन्त्रोक्त सिद्धान्त का भी एकीकरण होता है। **षट्-चक्रों** में जिन-जिन देवताओं का वास माना जाता है, वे व्यष्टि-रूप हैं। **'यः पिण्डे स ब्रह्माण्डे'** की उक्ति के अनुसार वे देवता-गण भी उसी **परा-महा-शक्ति** के अंश हैं। जैसे 'शरीर' के सञ्चालन में उनका उपयोग है, वैसे ही 'ब्रह्माण्ड' में भी उनका रूप है।

'शक्ति'-उपासना का परम लक्ष्य 'अद्वैत'-तत्त्व

पिण्ड-ब्रह्माण्ड के अभेद का अनुभव कर **अद्वैत-तत्त्व** पर पहुँचना ही **शाक्त-वाद** का परम लक्ष्य है। **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** के अनुसार प्रथम मन्त्र में कहा हुआ शक्ति का स्थूल-रूप इस **'परा-शक्ति'** का ही रूपान्तर है, जो गुण-वैचित्र्य से नानाकार प्रतीत हो रहा है। **'एकं सद्-विप्रा बहुधा वदन्ति'** का यही अभिप्राय है। **द्वैत अवस्था में रहते हुए योग-क्षेम की प्राप्ति** करना भी अत्यन्त आवश्यक है। अत: **'सूक्त'** के दूसरे मन्त्र द्वारा ऋषि कहते हैं—

नमस्ते प्रवतो न पाद्यतस्तप: समूहसि। मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि॥२॥

अर्थात् हे देवि! प्रकृष्ट ज्ञानवालों को तू पतन की ओर नहीं ले जाती, इसलिए तुझे नमस्कार है क्योंकि तू तप, ज्ञान आदि श्रेष्ठ वस्तुओं का समूह है। अपने कल्याणात्मक रूपों से हमारी रक्षा कर। हम तेरी सन्तान हैं। हमारे लिए कल्याण (मय) का दर्शन करा।

भुक्ति-मुक्ति दोनों प्रकारों की प्राप्ति **'शक्ति-साधना'** से होती है। इसी अभिप्राय से **'सप्तशती'** में **सुरथ** तथा **समाधि** इन दोनों अधिकारियों को **महर्षि मेधा** ने उपदेश दिया है। **'भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव'** वाला सिद्धान्त इसी तत्त्व पर माना गया है। **'सूक्त'** के उक्त मन्त्र में यही बात कही गई है। **'सप्तशती'** (११/३१) के निम्न मन्त्र में भी ऐसा ही कहा गया है—

विद्यासु शास्त्रेषु विवेक-दीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या?
ममत्व-गर्तेऽति-महान्धकारे, विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम्॥

अर्थात् 'हे देवि! ज्ञान-उपाय के साधन आन्विक्षिकी आदि विद्याओं में, जिससे लोक के योग-क्षेम का विधान होता है, मनु आदि शास्त्रों द्वारा प्रवृत्ति एवं निवृत्ति तथा विवेक के दीप-स्वरूप वेदान्त आदि शास्त्रों का जो अनादर करते हैं, उन्हें 'अहम्-मम-अभिमान' रूप संसार में, जो अन्धकार-रूप है, तू घुमाती है।'

'अन्धं तम: प्रविशन्ति, ये अविद्यामुपासते'—इस मन्त्र में भी उक्त तत्त्व ही कहा गया है अर्थात् अविद्या की उपासना करनेवाले अन्धकार में चले जाते हैं। यही पतन है। **'विद्ययाऽमृतमश्नुते'**—विद्या से ही अमृत की प्राप्ति होती है। इसलिए तू विद्वानों को पतन की ओर नहीं ले जाती। अत: हमें भी वही मार्ग बता, क्योंकि—

लक्ष्मि, लज्जे, महा-विद्ये! श्रद्धे, पुष्टि-स्वधे, ध्रुवे!
महा-रात्रि, महा-माये, नारायणि! नमोऽस्तु ते।

अर्थात् ऐश्वर्य, लज्जा (शुभ गुण), महा-ज्ञान (अविद्या-निवर्तक), श्रद्धा, पुष्टि-रूप स्वधा, नित्य, महा-रात्रि-रूप अन्धकार, अज्ञान-स्वरूपावरण करनेवाला भी हे नारायणि! तेरा स्वरूप है। अत: तुझे नमस्कार है।

'यजुर्वेद' (१६।२) में इसे ही कल्याण-रूपवाली **'शिवा-तनु'** कहा गया है—

या ते रुद्र शिवा-तनूरघोरा पाप-काशिनी। तया नस्तन्वा शन्त मया, गिरिशन्ताभि-चाकशीहि॥

अर्थात् हे रुद्र! आपकी कल्याण-कारी शान्ति तथा ऐश्वर्यादि को प्रदान करनेवाली जो **'शिवा (महा-शक्ति) तनू'** है, उसके द्वारा हमें आप देखें। हम सब तेरे पुत्र हैं, हमारा कल्याण करें।

'अमृतस्य पुत्रा:'—इस श्रुति से सारा विश्व उसकी ही सन्तति है, यह सिद्ध होता है। **'यद् वै शिवं तन्मय:'** (**'तैत्तिरीय उपनिषद्'**) में कल्याण के वाचक **'मय'**-शब्द का व्यवहार किया गया है। उक्त बातों की सिद्धि

के लिए **वैदिक** एवं **तान्त्रिक कर्म-काण्डों** का निर्माण महर्षियों ने किया है, जिनका आचरण करके सभी प्रकार के ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है। **महर्षि कणाद** ने धर्म की व्याख्या की है कि '**यतोऽभ्युदय-निःश्रेयस-सिद्धिः स धर्मः**' अर्थात् जिससे अभ्युदय, ऐश्वर्य और मोक्ष की प्राप्ति हो, वही '**धर्म**' है। यह लक्षण '**शाक्त-धर्म**' में पूर्णतया घटित होता है।

'श्रीपरा-शक्ति' का सर्वोत्कृष्ट, सर्व-व्यापक, सर्व-कल्याणकारी स्वरूप

अब तीसरे मन्त्र से '**श्री परा-शक्ति**' के अस्त्र-शस्त्रों को नमस्कार करते हुए उसके सर्वोत्कृष्ट, सर्व-व्यापक तथा योगियों के हृदय में वास करनेवाले स्वरूप को ऋषि बताते हैं—

प्रवतो नयान्नम एवास्तु तुभ्यं नमस्ते, हेतये तपुषे च कृण्मः। विद्यते धाम परमं गुहा, यत्-समुद्रे अन्तर्निहिताऽसि नाभिः॥३॥

अर्थात् उच्च पदवी पर आरूढ़ योगियों को तू गिराती नहीं है, प्रत्युत उन्हें अपनी सायुज्य-पदवी प्रदान करती है। हम तुझे नमस्कार करते हैं। तेरे अस्त्र-शस्त्र को भी हमारा नमस्कार है, जिन्हें तूने असुरों के विनाशार्थ ग्रहण किया है। तेरा परम धाम गुप्त हृदय-प्रदेश है, उसमें आधार-रूप से तू छिपी हुई है, उसे हम जानते हैं।

'**अहं मम-रूप**' अविद्या-जन्य संसार में ही लगे रहनेवाले जीव बार-बार जन्म-मरण-रूप संसार में आते रहते हैं, क्योंकि उनके सुख का आधार क्षणिक, विनाशी, आपात रमणीय यह संसार ही है। उन्हें शाश्वत शान्ति नहीं मिलती। अतः मुमुक्षु इससे विरक्त होकर '**विद्या**' का अनुसरण करता है। उसी को '**यद् गत्वा न निवर्तन्ते, तद्-धाम परमं मम**' (गीता) वाली उक्ति से कहा गया है। '**सोऽध्वनः पारमाप्नोति, यस्माद् भूयो न जायते**' (कठोननिषत्) अर्थात् ब्रह्म को प्राप्त होने पर फिर संसार में मुमुक्षु नहीं आता। इसी तत्त्व को '**प्रततो न पात्**' पद से कहा गया है। यही '**शक्ति**' **का परम धाम** है।

'**सप्तशती**' (४-९) में कहा गया है—'**मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि!**' अर्थात् समस्त अविद्या-दोषों से रहित होकर मोक्षार्थी मुनि-गण '**विद्या**'-रूप से तुम्हारा ही अभ्यास करते हैं। वह '**विद्या**' तुम हो। जब-जब भक्त-समुदाय असुरों से पीड़ित होता है, तब-तब असुरों के विनाशार्थ **श्रीआदि-शक्ति** का आविर्भाव होता है, जिसे किसी-न-किसी प्रकार से सभी आस्तिक-समुदाय मानता है।

'**इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति। तदा तदाऽवतीर्याऽहं करिष्याम्यरि-संक्षयम्**'—इस मन्त्र से यही बात कही गई है। उस समय अनेक तेज-स्वरूप अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर **श्रीअम्बा** प्रकट होती हैं। इसे ही '**सूक्त**' में '**हेतये च तपुषे**' पद से कहा गया है। '**सप्तशती**' (४।२६) में भी **श्री भगवती** के अस्त्रों से रक्षा की प्रार्थना की गई है—'**खड्ग-शूल-गदादीनि, यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके! कर-पल्लव-सङ्गीनि, तैरस्मान् रक्ष सर्वतः**' (४-२७) अर्थात् हे अम्बिके! खड्ग, शूल, गदा आदि जितने तुम्हारे अस्त्र-शस्त्र हैं, उनसे तू हमारी सब ओर से रक्षा कर।

'हे देवि! समुद्र परमात्मा में अभेद-सम्बन्ध से सामरस्य-भावापन्न होकर तू छिपी हुई है, उसे हम उपनिषद् द्वारा जानते हैं'—'**मम योनिरप्सु अन्तः समुद्रे**' (देवी-सूक्त, ७)—इस मन्त्रांश में भी '**समुद्र**'-पद आधारार्थों में व्यवहृत हुआ है। **सायणाचार्य** ने इसका अर्थ परमात्मा ही किया है—'**समुद्र-वन्त्यस्माद्-भूतानि इति समुद्रः परमात्मा**' अर्थात् सब प्राणी-समूह जिससे प्रकट होते हैं, इसलिए परमात्मा को '**समुद्र**' कहते हैं। बहुत लोग इस

मन्त्रांश से '**ब्रह्म**' को कारण तथा '**शक्ति-तत्त्व**' को कार्य समझते हैं, परन्तु यह भ्रम है। **गीता** में योनि-कारण '**शक्ति**' को भी '**ब्रह्म**' कहा गया है—'**मम योनिर्महद्-ब्रह्म, तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्।**'

वास्तव में निमित्त की अपेक्षा से '**ब्रह्म**' और '**शक्ति**' दोनों के परम-कारणत्व का व्यवहार होता है। '**यो वेद-निहितं गुहायां परमे व्योमन्, सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चितेति** (तैत्तिरीय उपनिषद्) के इस वचन में भी मन्त्रार्थ को विशद किया गया है।

उक्त तीनों मन्त्रों द्वारा '**शक्ति-तत्त्व**' **का भौतिक, दैविक** तथा **आध्यात्मिक रहस्य** बताया गया है। वैदिक, तान्त्रिक एवं पौराणिक मतों में '**शक्ति**' का जो स्वरूप माना जाता है, उसका अभेद दिखलाया गया है। जो लोग पौराणिक एवं तान्त्रिक सिद्धान्त को वेद-बाह्य अनार्यों की वस्तु बताते हैं तथा उसमें वर्णित काली आदि शक्ति-रूपों की पूजा को अनार्य-पूजा कहते हैं, उन्हें वैदिक सिद्धान्त को विचार-पूर्वक देखना चाहिए तथा समझ-बूझकर सम्मति देनी चाहिए।

वैदिक साहित्य में 'देवी' या 'शक्ति'-शब्द का प्रयोग

वैदिक साहित्य में अनेक बार '**देवी**' या '**शक्ति**'-शब्द का प्रयोग हुआ है। '**प्राणो वा अपानो व्यानस्तिस्त्रो देव्यः**' (ऐतरेय, २-४) अर्थात् वहाँ पर '**प्राण**', '**अपान**' और '**व्यान**'—इन तीनों को '**देवी**' बताया है। '**अपान**' और '**व्यान**' भी '**प्राण**' के ही रूप हैं। वास्तव में '**प्राण**' ही '**शक्ति**' है। इसी को लोक में '**दम**' कहते हैं। इसीलिए ऐसी कहावत है कि '**दम से ही आदम है, अन्यथा मुर्दा है।**' इसी **प्राण, अपान** और **व्यान** को पौराणिक सिद्धान्त में '**महा-काली**', '**महा-लक्ष्मी**' और '**महा-सरस्वती**' कहते हैं। महा-विद्या-क्रम में यही '**काली**', '**तारा**', '**षोडशी**' हैं।

'**अथैषकः प्रजापतिस्तद्-देव्यश्च कश्च, तस्माद् देविकाः पञ्च भवन्ति। पञ्च हि दिशः**' (श०, ९-५-१-३९७) अर्थात् **प्रजापति** (**परमात्मा**) और उसकी देवियाँ पाँच हैं क्योंकि दिशाएँ पाँच ही हैं। '**पञ्चाम्नाय**' में ही देवी-देवताओं का समस्त विभाग है। **दीक्षा**-काल में **दिशा-क्रम** से ही '**घट**'-**स्थापन** करके **पाँच आम्नायों** का उपदेश होता है। **षष्ठाम्नाय**—'**अधराम्नाय**' कहलाता है या '**अनुत्तराम्नाय**'। उसका उपदेश अमुख्य होने से पाँच में ही गतार्थ होने से पाँच ही कहा गया है।

'**ता वा एता देव्यः दिशो ह्येता (देव्यः दश दिशः)।**'

अर्थात् ये दशो दिशाएँ ही **दश-देवियाँ** हैं। '**महा-भागवत**' में ऐसी कथा आई है कि जब सती अपने पिता दक्ष के घर जाने लगीं, तब उन्हें **श्री शङ्कर** ने रोका। इस पर अपने भयानक रूप से प्रकट होकर उन्होंने अपना महत्त्व दिखाया। **श्री महादेव** उसे न देख सकने के कारण उठकर भागे। तब **श्री भगवती** ने दशों दिशाओं में अपने '**दश महा-विद्या-रूप**' धारण कर **श्री शङ्कर** को रोका था। इस कथा का मूल उक्त श्रुति ही है। **दशों विद्याओं** की '**लय**'-**भावना** की भी कथा वहीं पर कही हुई है। सभी रूपों का लय '**श्रीकाली-रूप**' में किया गया है। यही रूप सब शक्ति-रूपों में मुख्य है। इसका एक स्वतन्त्र ही विज्ञान है।

'**रुद्र-रूप**' **शिव** की ही ये शक्तियाँ हैं। '**रुद्र**' अग्नि को कहते हैं—'**अग्निर्वै स देवः। तस्यैतानि नामानि। 'शर्व' इति यथा प्राच्या आचक्षते, 'भव' इति यथा वाहीकाः, पशूनां पती रुद्रोऽग्निरिति**' (श० १-७-३-८) अर्थात् उस देवी को '**शर्व**', पूर्व देशवाले उसी को '**भव**', वाहीकदेशोद्भव '**पशु-पति**', '**रुद्र**' और '**अग्नि**' आदि नामों से कहते हैं। कौ०, १९-४ में कहा है—

'रुद्रो हि वै एष देवानामशान्तः सञ्शितो भवति।'

अर्थात् देवताओं में '**रुद्र**' अशान्त अग्नि-तत्त्व है। इसीलिए रुद्र-रूप में ही संहार, युद्ध आदि कार्यों के लिए मुख्यतः इसकी उपासना की जाती है। रौद्र-रूपों में '**काली-रूप**' प्रधान होने से '**मुण्डक उपनिषद्**' में—**'काली कराली च मनोजवा च, सुलोहिता या च सु-धूम्र-वर्णा। विस्फुल्लिङ्गिनी विश्वरुची च देवी, लेलायमाना इति सप्त-जिह्वा'**—प्रथम निर्दिष्ट है।

'पञ्च-शून्य-स्थिता तारा, सर्वान्ते कालिका स्मृता'—इस तन्त्र-वाक्य द्वारा भी '**काली**' की प्रधानता सिद्ध होती है। **'चतुर्युगानां राज्ञी वै, कालिका परि-कीर्तिता। विद्या-राज्ञी सिद्धि-विद्या, कलौ शीघ्र फल-प्रदा'** (शक्ति-सङ्गम तन्त्र)। **'कलौ काली विशिष्यते'** आदि वचनों से '**काली-रूप**' की प्रधानता ज्ञात होती है।

सप्तशती एवं वेदोक्त 'शक्ति'-तत्त्व

रौद्र-रूप की प्रचण्डता को लक्ष्य करके शिल्प-विज्ञान के अनुसार शक्तियों की मूर्ति-कल्पना की गई है। वैदिक साहित्य में '**शक्ति-तत्त्व**' की प्रचण्डता का निरूपण अनेक स्थानों में किया गया है। '**अथर्व**'-**वेद** के उक्त प्रथम काण्ड के १३वें '**सूक्त**' के चौथे मन्त्र में '**शक्ति-तत्त्व**' तथा '**सङ्गठन-शक्ति**' का रहस्य भी बताया गया है, जो '**सप्तशती**' के मध्यम चरित की कथा का मूल है। इसी रहस्य को लेकर '**मार्कण्डेय पुराण**' में विस्तार से कहा गया है।

'यां त्वा देवा असृजन्त विश्व इषुं कृण्वाना असनाय धृष्णुम्। सा नौमूड विदथे गृणाना तस्यै ते नमो अस्तु देवि!॥४॥

अर्थात् जिस महा-शक्ति को '**धृष्णु**'—सब देवों को कष्ट देनेवाले महिषासुर को मारने के लिए युद्ध में स्तुति द्वारा सब देवताओं ने '**वाण**' अर्थात् उसके नाश के साधन-रूप से बनाया था, वह देवी हमारी रक्षा करे। हे देवि! तुझे नमस्कार है क्योंकि युद्ध में तेरी ही स्तुति होती है।

'**सप्तशती**' के दूसरे अध्याय में यह कथा है कि **महिषासुर दैत्य** ने एक समय अपने आतङ्क से देवताओं को पीड़ित किया था। देवताओं ने **ब्रह्मा, विष्णु** और **महेश** के साथ मिलकर एक महान् तेज प्रकट किया। वह तेज दिव्य स्त्री-रूप में प्रकट हुआ। अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र को उसे सब देवताओं ने प्रदान किया। सभी के अङ्ग-रूप से वह **महा-शक्ति** बनी थी, जिसे कहा गया है—**'निःशेष-देव-गण-शक्ति-समूह-मूर्त्या'** अर्थात् **समस्त देवताओं के शक्ति-समूह की मूर्ति।** इसे ही '**सूक्त**' में '**यां त्वा देवा असृजन्त विदथे गृणाना**' के रहस्य-मय पदों से कहा गया है।

उक्त '**सामूहिक शक्ति**' ने **महिषासुर** को युद्ध में मारा, जिसे अकेले **ब्रह्मा, विष्णु, महेश** आदि देवता भी नहीं मार सके थे। '**सप्तशती**' के तीसरे अध्याय में यह प्रसङ्ग स्पष्ट रूप से कहा गया है। चौथे अध्याय में उसी महत्त्व-पूर्ण महती देवता की स्तुति भी देवताओं ने की है, जो अपूर्व है। **'सङ्गच्छध्वं सम्वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्'**—ऋग्वेद वाले इस **वैदिक एकता** के रहस्य को प्रकट करने के लिए ही '**मध्यम चरित**' की कथा लिखी गई है।

'**शक्ति-तत्त्व**' के समस्त रहस्यों को प्रकट करनेवाले इस '**सप्तशती**' ग्रन्थ-रत्न में यदि '**सङ्गठन**'-**शक्ति** का निरूपण न होता, तो एक बड़ी भारी कमी रह जाती क्योंकि '**सङ्घे शक्तिः**' वाली युक्ति ही सर्व-श्रेष्ठ

'शक्ति-वाद' की उक्ति है। इसी का निदर्शक यह **'मध्यम चरित'** है। इसीलिए **'सप्तशती'** के तीनों चरितों में यह चरित सबसे श्रेष्ठ है। **प्रथम एवं उत्तर चरित का पाठ** अकेले करना मना है, परन्तु **'मध्यम चरित'** के विषय में यह बात नहीं है। इसका पाठ अकेले भी कर सकते हैं—**'एकेन वा मध्यमेन, नैकेनेतरयोरिह'** (वैकृतिक रहस्य, ३२) अर्थात् **एक मध्यम चरित के पाठ** से ही पूर्णता हो जाती है, परन्तु **प्रथम** या **उत्तर-चरित का पाठ** अकेले न करे, इत्यादि।

इसी एकता के विषय में **'वेद'** कहता है—**'तत्र को मोहः, कः शोक, एकत्वमनुपश्यतः'** (यजु: ४०-४) अर्थात् एकता देखनेवाले ज्ञानी-समाज को शोक कहाँ और मोह कहाँ! युद्ध के समय ही एकता का परम उपयोग होता है। इसीलिए **'विदथे गृणाना'** कहा गया क्योंकि युद्ध ही महान् आपत्ति है। स्वार्थ-परायणता के ही समय युद्ध होता है। अप-स्वार्थ में ही फूट का बीज होता है। किसी देश, संस्कृति, जाति के पतन में व्यक्तिगत अप-स्वार्थ की प्रधानता रखकर सामूहिक स्वार्थ की उपेक्षा होती है, जिसे इतिहासज्ञ पूर्ण रीति से जानते हैं। ऐसे समय **'महा-लक्ष्मी'** ही सुमति प्रदान कर अपने राष्ट्र-भक्तों की रक्षा करती है।

भारतीय युद्ध में प्रवृत्त **अर्जुन** को **भगवान् श्रीकृष्ण** ने इसीलिए **गीतोपदेश** के प्रथम **श्रीदुर्गा भगवती की स्तुति** करने को कहा था, जिसे **भीष्म-पर्व** में बड़े ही सुन्दर रूप में अङ्कित किया गया है। जो इस **'महा-शक्ति'** की उपासना करता है, उसे फिर और किसी की उपासना करने की आवश्यकता नहीं रहती। इसीलिए **'सूक्त'** के तीसरे मन्त्र में कहा गया है—**'नम एवास्तु तुभ्यम्'** अर्थात् तुम एक ही को हमारा नमस्कार है।

उक्त **'सूक्त'** के चारों मन्त्रों में सात बार **'नमः'** शब्द का प्रयोग होने से संसार की सञ्चालिका **सप्त-मातृका-रूप** को तथा **निवृत्ति की सप्त-भूमिका** को नमस्कार किया गया है। **'तस्यै ते नमो अस्तु देवि'**—इसमें स्त्री-लिङ्ग-वाचक **'तस्यै'** **'देवि'** पदों से यह **'सूक्त'** शक्ति-वाद का ही पोषक है, यह निःसन्दिग्ध रूप से सिद्ध हो जाता है। **'देवि'**-पद सम्बोधन का होने से **'सूक्त'** के प्रत्येक मन्त्र से इसका सम्बन्ध है।

युद्ध के प्रसङ्ग में एक बात कहनी रह गई कि विजय प्राप्त होने पर अभिमान का होना स्वाभाविक है, जिसे बताने के लिए **'केन उपनिषद्'** की यक्ष की आख्यायिका बताई गई है। असुरों पर विजय प्राप्त करने पर देवताओं के अभिमान को निवृत्त करने के लिए साक्षात् कृपा-मयी **हेमवती उमा** का आविर्भाव उपनिषत्-कार ने क्या ही सुन्दर रूप से लिखा है, जिसका दूसरा उदाहरण **वैदिक साहित्य** में मिलना कठिन है।

ब्रह्म-विद्या ही अभिमान-अहङ्कार आदि रहित शाश्वत शान्ति को देनेवाली है। उसके बिना लौकिक विजय फिर पतन का हेतु हो सकती है। इसीलिए उपनिषत् का उपसंहार **'ज्येये स्वर्गे प्रति-तिष्ठति'** रूप में किया गया है। आज-कल साधक लोग केवल ऐहिक भावना से प्रेरित होकर **'शक्ति'** की उपासना एवं परिश्रम करते रहते हैं, जिससे यह परम रहस्य लुप्त होता जा रहा है। अतः श्री जगन्माता से बार-बार यही प्रार्थना है कि अपनी सभी सन्तानों के अन्दर अपने सभी रहस्यों को प्रकट कर कल्याण करें।

उपर्युक्त **'सूक्त'** की विवेचना यथा-मति की गई। इन मन्त्रों में और भी बहुत से रहस्य होंगे, क्योंकि वेदों के विषय में यह कहा गया है कि **'तपसा मन्त्राणामनेकेऽर्था भवन्ति'** अर्थात् तप से वेद-मन्त्रों के अनेक अर्थ हो जाते हैं। **'शक्ति'**-विषय के और भी कितने **'सूक्त'** हैं, जिनमें **'शाक्त-साधना'** के रहस्य भरे हुए हैं। विद्वानों का यह कर्त्तव्य है कि उसे प्रकट कर **'शाक्त-साधना'** को विशद करें तथा जनता को कल्याण-मार्ग की ओर ले चलने का सदुद्योग करें। ॐ शम्।

***

तुलसी घ्राण-मात्रेण क्रुद्धा भवति चण्डिका

* 'कुल-मार्तण्ड' मधुसूदनप्रसाद शुक्ल, प्रियदर्शिनी नगर, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

'कौल-कल्पतरु' चण्डी के वर्ष ६२ का तृतीय त्रैमासिक अङ्क **आद्या-कल्पा पूजनीया माई जी** की पुण्य स्मृति में **''कापालिक उवाच''** नामक निबन्ध-संग्रह के रूप में प्रकाशित हुआ है। इस सङ्कलन में **पूजनीया माई जी** के अनन्य शिष्य श्रद्धेय **कापालिक उद्बोधनानन्दनाथ** के ११ निबन्ध प्रकाशित हैं। इन निबन्धों में प्रस्तुत **शाक्त-धारणाओं** की व्याख्याओं की तथ्यात्मकता को चुनौती देना सर्वथा अशोभनीय एवं अवाञ्छनीय है, परन्तु एक-दो बातें ऐसी हैं, जिन पर हमारी दृष्टि से कुछ अधिक विवेचना की आवश्यकता है।

उदाहरण के रूप में **'धर्म-संकरता'**-नामक निबन्ध को देखिए। इस निबन्ध में यह प्रतिपादित किया गया है कि सामाजिक सम्पर्क के कारण **शाक्त**-जनों को **श्रीसत्यनारायण कथा** आदि **विष्णु-अर्चन**-परक आयोजनों में जाना पड़ता है। **विश्वम्भर विष्णु** का **तुलसी-दल** मिश्रित चरणोदक एवं प्रसाद उन्हें भी दिया जाता है। अत: उनके समक्ष **धर्म-सङ्कट** उत्पन्न हो जाता है। प्रसाद ग्रहण न करें, तो लोग नास्तिक कहेंगे और ग्रहण करें, तो **'कौल-धर्म'** का निरादर होगा क्योंकि **कौल**-जनों के लिए **'विष्णु'-पूजन** का निषेध है और **'तुलसी-दल'** लेना मना है, क्योंकि—**'तुलसी-घ्राण-मात्रेण क्रुद्धा भवति चण्डिका'** अर्थात् **'तुलसी'** को सूँघने भर से ही **चण्डिका** रुष्ट हो जाती हैं।

इस सम्बन्ध में हमारा निवेदन यही है कि प्राचीन पूजा-पद्धतियों में विधि एवं निषेध की व्यवस्था उलझनों से भरी हुई है और उसके सम्बन्ध में आज विस्तार-पूर्वक समाधान हो, तभी सभी बातें स्पष्ट हो सकती हैं, अन्यथा अर्थ का अनर्थ भी प्रचारित हो सकता है। उदाहरण के रूप में—**भगवान् शिव** के अर्चन के लिए **'कदम्ब'-पुष्प** भाद्रपद मास में प्रशस्त हैं, अन्य मासों में निषिद्ध। सायं-कालीन **'शिवार्चन'** के लिए **'बकुल'** प्रशस्त है, किन्तु प्रात:अर्चन के लिए निषिद्ध। यही बात **'चण्डिका-अर्चन'** के सन्दर्भ में **'तुलसी'** पर लागू होती है। एक ओर—**'तुलसी-घ्राण मात्रेण...'** आदि वाक्यों द्वारा इसका निषेध किया गया है, वहीं **'तुलसी'** की ग्राह्यता एवं प्रशस्तता-परक वचनों की भी भरमार है। यथा—

सुन्दरी भैरवी काली, ब्रह्मा-विष्णु-विवस्त:। विना तुलस्या या पूजा, सा पूजा निष्फला भवेत्॥

'शक्ति-यामल' के अनुसार—

सावित्रीञ्च भवानीञ्च, दुर्गा-देवीं सरस्वतीम्। योऽर्चयते तुलसी-पत्रै:, देवै: स्वर्गे स मोदते॥
तुलस्या पूजयेद् देवीं, देवान् गणपतिं विना। विना तुलस्या स्नानादीन्, श्राद्धं यज्ञार्चनं प्रिये!॥
न सम्पूर्ण-फलं प्राहु:, सर्व एव विपश्चित:। दूर्वा वा तुलसी तस्मात्, गृहीतव्या साधकै:॥

उक्त **'ग्राह्यता-परक'** वचनों के साथ **'निषेध-वचन'** भी हैं—

सर्व-तीर्थ-मयी सा तु, गणेशस्य प्रिया न हि। लक्ष्म्यास्तथा च तारायाः, न प्रिया तुलसी मता॥

पुराण-प्रसिद्ध सौतिया डाह के कारण **लक्ष्मी जी** को '**तुलसी**' प्रिय नहीं है। यहाँ '**तारा**' से अभिप्राय सभी विद्याओं एवं महा-विद्याओं से है। संक्षेप में; एक ओर '**सुन्दरी**', '**भैरवी**' एवं '**काली**' के अर्चन हेतु यह प्रशस्त है, तो दूसरी ओर इन्हीं '**महा-विद्याओं**' के पूजन में निषिद्ध है। इसमें क्या रहस्य है? हमारे विचार से इसका रहस्य उसी श्लोक के पूर्वांश में बताया गया है, जिसका उत्तरांश या अर्धांश है—'**तुलसी-घ्राण-मात्रेण.....**।' '**यामल**' का यह सम्पूर्ण श्लोक निम्नानुसार है—

रात्रौ रहस्य-पूजायां, तुलसीं वर्जयेत् सदा। तुलसी-घ्राण-मात्रेण, क्रुद्धा भवति चण्डिका॥

उक्त श्लोक के पूर्वांश से यह बात भली-भाँति स्पष्ट होती है कि **निशा-कालीन रहस्य-पूजा** में ही '**तुलसी**' का निषेध है। '**रहस्य-पूजा**' भगवती की विशिष्ट पूजा है, जिसका अधिकार केवल '**कौल-साधकों**' को है। इस '**रहस्य-पूजन**' की अपनी विशिष्ट पद्धति, विशिष्ट उपचार एवं विशिष्ट आचार-विचार हैं। कोई व्यक्ति शास्त्रों में प्रतिपादित '**तुलसी**'-महिमा से अभिभूत होकर '**रहस्य-पूजा**' के उपचारों में भी '**तुलसी**' का समावेश न कर ले, अत: स्पष्ट शब्दों में '**रहस्य-पूजा**' में '**तुलसी**' का निषेध किया गया। दिन के समय '**रहस्य-पूजा**' का निषेध है। अत: '**दिवा-कल्प**' में '**तुलसी**' के निषेध का कोई प्रामाणिक शास्त्र-वचन नहीं है।

'**विष्णु**'-**पूजन का निषेध**—'**कौलों**' के लिए '**तुलसी**'-पूजन की भाँति '**विष्णु**'-पूजन के सम्बन्ध में भी निषेध है। हमारे विचार से यह निषेध भी '**कौल**'-सम्प्रदाय के प्रति गहरी निष्ठा जाग्रत् करने के उद्देश्य से ही है, न कि सर्व-कालिक अथवा सर्व-देशीय वर्जना। आगमोक्त '**कौल-साधना**' से **भगवान् विष्णु** को एक सिरे से लुप्त नहीं किया जा सकता। '**प्राण-प्रतिष्ठा**', '**जीव-न्यास**'—'**कौल-साधना**' के महत्त्व-पूर्ण अङ्ग हैं। '**प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र**' के ऋषि-त्रय में एक ऋषि **भगवान् विष्णु** हैं। **अन्तर्याग** और **बहिर्याग**—इन दोनों ही यागों में **भगवती** के **आसन-अर्चन** के क्रम में **विष्णु भगवान्** के '**कूर्म**' और '**वराह**' अवतारों का नमन आवश्यक है। भगवती '**पञ्च-प्रेतासना**' हैं। इन **पञ्च प्रेतों** में एक प्रेत **भगवान् विष्णु** हैं। '**नवार्ण**'-मन्त्र की साधना में **प्रथम आवरण-पूजन** में अन्तस्थ **त्रिकोण** के नैऋत्य कोण में '**लक्ष्मी-नारायण**' के पूजन का स्पष्ट विधान है। **भगवती बगलामुखी** के ३४ और ३६ अक्षरोंवाले मन्त्रों के ऋषि '**पुरश्चर्यार्णव**' के अनुसार '**नारायण**' हैं। '**महा-सिंह-मन्त्र**' के ऋषि '**त्रैलोक्य-मोहन विष्णु**' हैं और यह '**महा-सिंह-मन्त्र**' श्मशान में उग्र '**वीर-साधना**' के अन्तर्गत '**आत्म-रक्षा**' के लिए प्रशस्त मन्त्रों में से एक है।

यही नहीं, '**कौल-साधना**'—'**काली, तारा, महा-त्रिपुर-सुन्दरी**' आदि **दश महा-विद्याओं** में से किसी एक के मन्त्र (विद्या) की '**दीक्षा**' लेकर की जाती है। ये महा-विद्याएँ '**पर-ब्रह्म**' के स्त्री-विग्रह हैं। '**पर-ब्रह्म**' के पुं-रूप हैं—**भगवान् विष्णु** के **राम-कृष्ण** आदि **दशावतार**। इसके अतिरिक्त उक्त **दश-महा-विद्याओं** के दोनों कुल—'**काली-कुल**' और '**श्री-कुल**' में अनेक ऐसी विद्याएँ (मन्त्र) हैं, जिन्हें '**विष्णूपासिता**', '**रामोपासिता**', '**भरतोपासिता**' कहा जाता है, जिनसे यही स्पष्ट होता है कि स्वयं **भगवान् विष्णु** '**महा-कौल**'—**सिद्ध-साधक** हैं। **कुल-मार्गियों** के लिए वे श्रद्धास्पद नहीं हैं, यह कहना ठीक नहीं।

'**आगम-शास्त्र**' **और** '**कुल-धर्म**'—आगम-सम्मत धर्म है। '**आगम ग्रन्थ**' एकान्त समग्रता में विविधता और विविधता में एकान्त समग्रता के प्रतिपादक हैं। उनमें उपासना-सिद्धि के लिए निषेध-परक वचन भी मिलते हैं, जो '**सन्दर्भ**' और '**प्रयोजन**'-परक हैं। अत: इन निषेध-परक वचनों को '**सन्दर्भ**' एवं '**प्रयोजन**' को समझकर ही भली-भाँति समझा जा सकता है। उदाहरण के रूप में '**योगिनी तन्त्र**' में कहा गया है—'**काली**

के उपासक **तारा** की और **तारा** के उपासक **काली** की पूजा न करें"—**'तारा-शिष्यस्तु त्यजेत् कालीं, काली-शिष्यस्तु तारिणीम्।'** अब इस वचन को प्रमाण मानकर **काली** और **तारा** के उपासक एक दूसरे के उपास्य की निन्दा करने लगें, तो अनर्थ हो जाएगा, क्योंकि ऐसा करके वे अपनी ही निन्दा करेंगे, क्योंकि **'काली'** और **'तारा'** एक ही हैं—**'या काली परमा विद्या, सैव तारा न संशयः।'**

इनमें कोई भेद है ही नहीं। इनमें इतना अभेद है कि **काली** में **तारा** की और **तारा** में **काली** की भावना करके पूजा करने तक का विधान **'योगिनी-तन्त्र'** में वर्णित है। अस्तु! जब **काली** और **तारा** में इतना अभेद है, तो उपर्युक्त **निषेध-परक** वचन का क्या रहस्य है? क्या प्रयोजन है? इसका एक-मात्र प्रयोजन **काली** और **तारा** के भक्तों में अपने-अपने **इष्ट-देवता** के प्रति **एकान्त-निष्ठा** तथा **अनन्यता** के भाव का **सम्वर्धन** और **सम्पोषण** है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि एकमेव पूज्य **'पर-ब्रह्म'** के अन्य नाम-रूपों को अपूज्य समझा जाए—उनका निरादर किया जाए, उनकी उपेक्षा की जाए!

'भाव' और 'आचार'-शुद्धि—अपने **इष्ट-देवता** के प्रति **एकान्त-निष्ठा** तथा **अनन्यता** का आधार है—**भाव** और **आचार** की शुद्धि। इसीलिए कहा गया है—**'आचारः परमो धर्मः'** अर्थात् **'आचार'** ही परम धर्म है। अपने **इष्ट-देवता** की उपासना के लिए विहित **'भाव'** एवं **'आचार'** का जितना दृढ़ता-पूर्वक पालन किया जाएगा, **इष्ट-देवता** के प्रति **एकान्त-निष्ठा** एवं **अनन्यता** का भाव उतना ही दृढ़ होगा। अतः **विष्णु-पूंजन** के निषेध-परक वचनों का प्रयोजन-गत निष्कर्ष यही निकलता है कि **कौल-उपासक** अपनी साधना-उपासना में **'कुलाचार'** का दृढ़ता-पूर्वक पालन करें। वे **कौलाचार** में किसी अन्य आचार का अप-मिश्रण न होने दें। भिन्न-भिन्न आचारों के **अप-मिश्रण** से न **'कौलाचार'** पुष्ट होगा, न **'वैष्णवाचार'**। इसमें किसी भी प्रकार से किसी **'आचार'** को त्याज्य, निन्दनीय बताने की बात नहीं है। बात है, तो केवल अपने **'आचार'** को पुष्ट करने की। निषेध-परक वचनों को हमें इसी पृष्ठ-भूमि में सुनना / विचारना चाहिए, न कि उनके नाम पर किसी के प्रति दुर्भाव रखना।

'कौल-साधकों' की जीवन-शैली अति विस्तृत एवं सर्व-व्यापक है। उसमें दुर्भाव, घृणा, बहिष्कार के लिए कोई स्थान नहीं है।

कौल-कल्पतरु चण्डी मासिक (हिन्दी) के स्वामित्व तथा तत्सम्बन्धी विवरण

१.	प्रकाशन का स्थान	प्रयाग	
२.	प्रकाशन की अवधि	मासिक	
३.	मुद्रक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा	
	पता	परा वाणी प्रेस, प्रयाग—६	
४.	प्रकाशक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा	
	राष्ट्रीयता	भारतीय	
५.	सम्पादक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा	
	राष्ट्रीयता	भारतीय	
६.	उन व्यक्तियों के नाम और पते जो इस पत्रिका के मालिक या साझेदार हैं या जो उसकी पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार हैं।	श्री ऋतशील शर्मा	

मैं, ऋतशील शर्मा, घोषित करता हूँ कि ऊपर दिए गए विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही हैं।

—**ऋतशील शर्मा (प्रकाशक)**

साधन - माला

['चण्डी' वर्ष ५१ (अङ्क १) में प्रकाशित बहुपयोगी कल्याण-प्रद प्रयोग]

[१]

'साधना'-योग्य शरीर हेतु अनुभूत प्रयोग

आध्यात्मिक साधना में सफलता पाने के लिए शरीर पहला प्रमुख साधन है। यदि शरीर ही साधक का साथ नहीं देगा, तो अन्य साधनों-पूजोपकरणों आदि का क्या भरोसा! अत: शरीर को स्वस्थ एवं प्रकृतिस्थ रखना साधक के लिए परमावश्यक है। इस सम्बन्ध में एक आयुर्वेद-मर्मज्ञ के प्रयोग प्रस्तुत हैं, जिनके अनुसार चलकर आध्यात्मिक साधना के इच्छुक बन्धु अपने शरीर को साधना-योग्य बनाए रख सकते हैं।

-सम्पादक

- प्रात: उठकर **धरती माता के चरण-स्पर्श** करें और दाँतों की दाँती जोर से पीसें। ऐसा करने से दाँत कभी भी नहीं उखड़ते और सुरक्षित रहते हैं।
- ठण्डे पानी को मुख में भर कर, उसके छींटे आँखों में दें। या बासी थूक अँगुली से आँखों में लगावें। बाद को शौच जावें।
- शौच जाने से पूर्व **शीतल जल** (बासी पानी) छ: चुल्लू पीवें। यह **'उष:-पान'** कहलाता है। ऐसा करने से पाखाना साफ आता है।
- शौच होने के बाद 'गुदा' को अँगुली द्वारा साफ करें। ऐसा करने से **'गुदा के रोगों'** (अर्श एवं कृमि-रोग) से छुटकारा मिलता है। आस-पास के 'वलिकों' को दबाना ठीक रहता है।
- इसी समय इन्द्रिय को भी स्नान कराकर साफ रखें। ऐसा करने से **'धातु-स्राव'** (शुक्र-रोग—'प्रमेह' आदि) नहीं होता। यह 'शिश्न-स्नान' कहलाता है।
- इसके बाद हाथ-पाँव धोकर, मञ्जन कर, १५ बार कुल्ली करें, ताकि तालु से चिपटा हुआ कफ निकल जावे। इससे 'स्वर' शुद्ध होता है और **'नेत्र-ज्योति'** बढ़ती है।
- फिर व्यायाम या **'सूर्य-प्रणाम'** करें। कम-से-कम १२ बार। इससे **रीढ़ की हड्डी सीधी** रहने से आरोग्यता में सहायता मिलती है। हर समय इसका ध्यान रक्खें। लेटते समय भी चित्त होकर, पैरों पर तनाव देकर, कमर को ऊपर की तरफ कर, सीधा करना सीखे। यह विधि बड़ी सुन्दर एवं उपयोगी है। फिर तेल लगा नाक में ६-६ बूँद, कान में ६-६ बूँद तेल डालें। तालु, नाभि, अँगुलियों के बीच, तलवों पर भी तेल-मर्दन करें और सर्वाङ्ग में भी। **बाद को ठण्डी देह कर स्नान करें।** स्नान

के समय भींगे तौलिए से, नाभि के नीचे पेडू को ७ बार धीमे से मलना चाहिए क्योंकि '**रोगोत्पादक मल**' यहीं जमा होते हैं। स्नान के बाद देह को खुरदरे तौलिए से रगड़ना चाहिए तथा स्वच्छ वस्त्रादि पहन कर '**पूजा-पाठ**' करे और धूप, दीप, नैवेद्य दें। धूप देने से वायु शुद्ध होती है।

- बिना **चन्दन** लगाए **जप-तप, देव-पूजन** व्यर्थ होता है। **चन्दन** से माथा साफ रहता है, रोम विलय होते हैं। **चन्दन** से आत्मा आह्लादित रहती है।
- **रुद्राक्ष** की माला पहिनने से चेचक, विस्फोट, रक्त-दोष नहीं होते। अत: **माला** ऐसी पहिने कि चमड़ी से लगती रहे और पसीने से तर हो राम-कूपों के द्वारा प्रवेश करती रहे।
- स्नान के बाद **भोजन** के समय, **भगवान्** को भोजन का अंश भावना द्वारा अर्पित कर, उनके **प्रसाद**-रूप में भोजन करना चाहिए। ऐसा करने से भोजन का दोष, शरीर को हानि नहीं पहुँचाता।
- भोजन के बाद पेट पर हाथ फेरते हुए कहें—

  अगस्त्यं कुम्भ-कर्णं च, हनुमन्तं बड़वानलं। भोजनं परिपाकार्थं, भीमसेनं स्मराम्यहम्॥

- भोजन कर **मूत्र-विसर्जन** अवश्य करें। ऐसा करने से '**मूत्र-रोग**' कभी नहीं होते। भोजन करके बैठे रहने से कोष्ठ-बद्धता, लीवर, प्लीहा और आन्त्र-विकार घेर लेते हैं। अत: चित्त लेटकर ८ श्वास, दाहिने १६, बाँएँ ३२ श्वास अवश्य लेना चाहिए।
- सोते समय आँखों में **कर्ण-गूथ (ठूँठ)** लगावें। इससे '**दृष्टि-दोष**' दूर हो, '**नेत्र-ज्योति**' तीव्र होती है। चश्मा लगाने की आदत छूट जाती है।
- सिर को ढँककर ही **मल-मूल का त्याग** करना चाहिए। कान पर **यज्ञोपवीत** रखकर मल-मूत्र त्याग करना विज्ञान-सम्मत बात है—मल-मूत्र त्याग करते समय देह की ऊष्मा मल-मूल के द्वारा निकलती है और बाहर की हवा का दबाव पड़ने से शरीरोष्मा कम हो जाती है, ऊष्मा की क्षीणता से अनेक रोग पैदा होते हैं। —'**वैध-राज**' **पण्डित विश्वेश्वरदयाल जी**

***

[२]

नित्य-कर्म

सभी प्रकार की '**साधना**' की सफलता नित्य-कर्मों पर निर्भर है। प्रत्येक साधक को पूर्ण अनुशासन के साथ अपने **नित्य-कर्मों** को सम्पन्न करना चाहिए। '**नित्य-कर्म**' प्रात:-काल निद्रा टूटने के बाद '**प्रात:-कृत्य**' से प्रारम्भ हो जाता है। यहाँ '**प्रात:-कृत्य**' का एक अत्यन्त **लघु क्रम** प्रस्तुत है। जो पाठक-बन्धु '**प्रात:-कृत्य**' न करते हों, वे इससे लाभ उठा सकते हैं।—**सं०**

प्रात:-काल निद्रा टूटने के बाद मन को प्रफुल्लित करने के लिए **पुण्यवान् व्यक्तियों, मङ्गल-मय पदार्थों का नाम लेकर स्मरण** करना चाहिए। मन के उदास होने एवं प्रेरणा-शून्य होने से, उसे कार्य करने में आवश्यक उत्साह नहीं होता। अत: निद्रा समाप्त होते ही **देवताओं और ऋषियों आदि के नामों का स्मरण** अवश्य करे—

१. प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं, दुर्गा दुर्गाऽक्षर-द्वयम्।
आपदस्तस्य नश्यन्ति, तमः सूर्योदये यथा॥

अर्थात् जो प्रति-दिन प्रातः-काल '**दुर्गा...दुर्गा...दुर्गा...दुर्गा...**' इस दो अक्षरवाले **दुर्गा**-नाम को स्मरण करता है, उसकी सभी आपत्तियाँ उसी प्रकार नष्ट हो जाती हैं, जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार दूर होता है।

२. हरे मुरारे मधु-कैटभारे, गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे।
यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो, निराश्रयं मां जगदीश! रक्ष॥

अर्थात् **हे हरि! हे मुरारि! हे मधु-कैटभ के अरि! हे गोपाल! हे गोविन्द! हे मुकुन्द! हे शौरि!** (वसुदेव के पिता का नाम शूर था, उनके वंशज अर्थात् '**कृष्ण**'-'**शौरि**' कहलाते हैं) **हे यज्ञेश्वर! हे नारायण! हे कृष्ण! हे विष्णु! हे जगदीश्वर!** मुझ आश्रय-हीन की रक्षा करो।

३. ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्त-कारी, भानुः शशी भूमि-सुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः, कुर्वन्तु सर्वे मम सु-प्रभातम्॥

अर्थात् **ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु** और **केतु**—ये सब मेरे प्रातः-काल को मङ्गल-मय करने की कृपा करें।

४. अहल्या द्रौपदी कुन्ती, तारा मन्दोदरी तथा।
पञ्च-कन्या स्मरेन्नित्यं, महा-पातक-नाशनम्॥

अर्थात् १ **अहल्या**, २ **द्रौपदी**, ३ **कुन्ती**, ४ **तारा** और ५ **मन्दोदरी**—इन पाँच कन्याओं का प्रति-दिन स्मरण करने से महा-पाप का नाश होता है।

५. ॐ कराग्रे वसते लक्ष्मीः, कर-मध्ये सरस्वती।
कर-मूले महा-काली, प्रभाते कर-दर्शनम्॥

अर्थात् अपने दाहिने हाथ की हथेली को देखते हुए उपर्युक्त श्लोक पढ़े और **शय्या का त्याग** करे। अर्थ यह है कि हाथ के अगले भाग में **लक्ष्मी**, मध्य में **सरस्वती** और कलाई में **महा-काली** निवास करती हैं। अतः मैं प्रातः-काल इस प्रकार के हाथ का दर्शन करता हूँ।

❋❋❋

[३]

शान्ति-कर्म

'**शान्ति-कर्म**' वे प्रयोग हैं, जिनसे **ग्रहों के दोषों का निवारण** होता है; **भूत-प्रेत आदि अदृष्ट उपद्रवों का शमन** होता है एवं **रोग, दुर्घटना, शत्रुता आदि अनिष्टों से रक्षा** होती है।

कलि-युग में चार प्रकार के मुख्य '**शान्ति-कर्म**' प्रशस्त और अनुभूत हैं। यथा—**१. चण्डी** या **श्रीदुर्गा-सप्तशती का पाठ, २. दुर्गा-नाम-जप, ३. पार्थिव शिव-पूजन, ४. हरि-नाम-कीर्तन (विष्णु सहस्र-नामादि)**—

पठेच्चण्डीं जपेद् दुर्गां, पूजयेत् पार्थिवं शिवम्। कारयेद्धरि - नामानि, कलौ काम्यं चतुष्टयम्॥

अर्थात् कलि-युग में **१. चण्डी-पाठ, २. दुर्गा-नाम-जप, ३. पार्थिव शिव-पूजन** एवं **४. हरि-नाम-कीर्तन**—इन चार प्रकार के **काम्य-अनुष्ठानों** से मनुष्यों की समस्त आपत्तियों की शान्ति होती है। इन चारों **काम्य-अनुष्ठानों** के लिए आवश्यक '**सङ्कल्प**' निम्न प्रकार करने चाहिए—

१. चण्डी-पाठ का सङ्कल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम सर्वापच्छान्ति-पूर्वकं झटिति मनोऽभीष्ट-सिद्धि-कामः (**रोगादि-पक्षे**—गोचर-विलग्नादि-स्थानावस्थित-रव्यादि-नव-ग्रह-संसूचित-संसूच्यमान-संसूचयिष्यमान-सर्वारिष्ट-प्रशमन-पूर्वक-जीव-वदेतत्-स्थूल-शरीर-विरोधेनोत्पन्नामुक-रोगाणां झटिति प्रशमन-कामः) महर्षि वेदव्यास-प्रोक्त-'जयाख्य'-मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत—'**मार्कण्डेय उवाच। सावर्णिः सूर्य-तनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः**' इत्यादि '**एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः, सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः**' इति '**मार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये देवी-माहात्म्यं समाप्तं**' इत्यन्तस्य देवी-माहात्म्यस्य एकावृत्तिः (त्रिरावृत्तिः वा) पाठ-कर्माहं करिष्यामि।

❋❋

२. श्रीदुर्गा-मन्त्र-जप का सङ्कल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम सर्वापच्छान्ति-पूर्वकं झटिति श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः अष्टोत्तर-शत-संख्यक (अष्टोत्तर-सहस्र-संख्यकं वा) '**ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहे**'ति मन्त्रस्य जपमहं करिष्यामि।

❋❋

३. पार्थिव-शिव-पूजा का सङ्कल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम सर्वापच्छान्ति-पूर्वकं झटिति शिव-लिङ्गाधिकरणक-शिव-प्रीति-कामः इयत्-संख्यक-पार्थिव-शिव-लिङ्ग-पूजनमहं करिष्यामि। **जप-मन्त्र : 'ॐ नमः शिवाय', 'ॐ हौं जूं सः'**।

❋❋

४. तुलसी-पत्र-दान का सङ्कल्प

ॐ विष्णु: विष्णु: विष्णु: तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम सर्वापच्छान्ति-पूर्वकं झटिति श्रीविष्णु-प्रीति-काम: '**ॐ नमस्ते बहु-रूपाय विष्णवे परमात्मने स्वाहे**'ति मन्त्रेण अष्टोत्तर-संख्यक (यदृच्छा-दान-संख्यकं वा) स-चन्दन-तुलसी-पत्र-दानमहं करिष्यामि।

❋❋

५. मधुसूदन-मन्त्र-जप का सङ्कल्प

ॐ विष्णु: विष्णु: विष्णु: तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय-प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्वत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम सर्वापच्छान्ति-पूर्वकं झटिति श्रीविष्णु-प्रीति-काम: अष्टोत्तर-शतं (यदृच्छ-संख्यकं वा) '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाये**'ति मन्त्रस्य जपमहं करिष्यामि।

'**सङ्कल्प**' के जो उदाहरण ऊपर दिए गए हैं, उनसे उनके स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि '**सङ्कल्प**' करना कितना आवश्यक है क्योंकि '**काम्य कर्म**' कौन कर रहा है, कब कर रहा है, क्या कर रहा है और किस उद्देश्य से कर रहा है—इस सबका उल्लेख 'कर्म' के प्रारम्भ में करना अति आवश्यक है। **स्थान, सम्वत्सर, मास, तिथि** आदि परिवर्तन-शील हैं, अत: श्री गुरु-देव या मार्ग-दर्शक से '**सङ्कल्प**' के प्रारूप को समुचित रूप में जान लेना चाहिए।

—प० पू० स्वामी श्री हिमालय अरण्य जी की कृपा से प्राप्त

❋❋❋

[४]

योग्य वर-प्राप्ति का प्रयोग

कात्यायनि! महा-माये! महा-योगिन्यधीश्वरि!
नन्द-गोपं-सुतं देवि! पतिं मे कुरु ते नम:॥

जो कन्या योग्य वर चाहती हो, वह इस मन्त्र का **जप-अनुष्ठान** करे।

स्नान कर, पवित्र वस्त्र धारण कर, प्रात:-सायं दोनों समय '**जप**' करे। प्रत्येक बैठक में कम-से-कम तीन माला अर्थात् एक दिन में छ: माला '**जप**' करना चाहिए। मालाओं का लेखा (हिसाब) रखना चाहिए। जब

एक लाख '**जप**' हो जाए, तब किसी **शुक्रवार** अथवा अन्य **शुभ दिवस** को **माता गौरी (पार्वती) का पूजन** कर, **ब्राह्मणों** व **अनाथों** को **भोजन** कराना चाहिए। प्रत्यक्ष देवी-स्वरूपा **कन्याओं** का भी पूजन-अर्चन कर, उन्हें वस्त्रादि देकर सन्तुष्ट करना चाहिए।

❋❋❋

[५]

सन्तान-प्राप्ति-प्रयोग

देवकी-सुत गोविन्द, वासुदेव जगत्पते!
देहि मे तनयं कृष्ण! त्वामहं शरणं गतः॥

पति-पत्नी दोनों ही इस मन्त्र का जप कर सकते हैं। पत्नी जब इस मन्त्र का जप करे, तो अन्तिम शब्द '**गतः**' के स्थान में '**गता**' उच्चारण करे।

स्नानादि कर, पवित्र वस्त्र धारण कर, प्रातः-सायं दोनों समय '**जप**' करना चाहिए। एक बैठक में कम-से-कम तीन माला अवश्य '**जप**' करना चाहिए। जब एक लाख '**जप**' हो जाए, तब **पूर्णाहुति (१०००)** करनी चाहिए। '**हवन**' कर ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए। **कुमार-वटुकों** को प्रसाद-वस्त्रादि वितरण करना चाहिए।

जप का लेखा—१०८ मणियों की माला अर्थात् १०८ जप, प्रति माला। प्रति-दिन ६ माला = १०८ × ६ = ६४८ जप प्रति-दिन। ६४८ × ३० = १९,४४० जप प्रति मास। इस प्रकार **एक लाख 'जप'**, प्रायः ५ मास, ५ दिनों में समाप्त हो सकते हैं।

❋❋❋

[६]

गप-शप विष-हर प्रयोग

श्री राम राम रामेति, रमे रामे मनोरमे।
सहस्र-नाम तत्-तुल्यं, राम-नाम वरानने॥

यह 'मन्त्र', 'गप-शप' के दोष को निवारण करनेवाला है। जब आपको ऐसा प्रतीत हो कि आपने 'गप-शप' में अपना समय नष्ट किया है, तो आप इस 'मन्त्र' का कई बार '**जप**' कीजिए। आप अपने विनष्ट समय की पूर्ति करने में समर्थ होंगे।

❋❋❋

[७]

दीर्घ आयु, सुख-शान्ति हेतु प्रयोग

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे, सुगन्धिं पुष्टि-वर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनात्, मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

अर्थात् हम **भगवान् शिव** की आराधना करते हैं, जो सुगन्धित (सु-वासित) हैं तथा जो सब प्राणियों का भरण-पोषण करते हैं। अमरत्व-प्राप्ति के हेतु **भगवान् शिव** हमें मृत्यु से मुक्त करें, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि पका हुआ खीरा लता से टूट कर गिर पड़ता है और मुक्त हो जाता है।

यह **जीवन** या **आयुष्य प्रदान करनेवाला 'मन्त्र'** है। आजकल जब जीवन अत्यन्त जटिल हो गया है, आकस्मिक दुर्घटनाएँ प्रति-दिन होती रहती हैं, तब यह **'मन्त्र'**—सर्प-दंशन, बिजली, अग्नि, वायु, जल, वाहन आदि द्वारा होनेवाली **दुर्घटनाओं में मृत्यु से रक्षा** करता है। इसके अतिरिक्त यह **आरोग्य** प्रदान करने का अति प्रभाव-शाली **'मन्त्र'** है। इस मन्त्र का श्रद्धा, प्रेम और यथार्थ रूप से **'जप'** किया जाए, तो इससे वे **भयङ्कर रोग** भी दूर हो जाते हैं, जिन्हें वैद्यों व चिकित्सकों ने असाध्य घोषित कर दिए हैं। संक्षेप में यह **रोगों का हनन** करनेवाला, **मृत्यु पर विजय** प्राप्त करानेवाला, **दीर्घायु, शान्ति, पुष्टि, तुष्टि** और **मोक्ष** प्रदान करानेवाला **भगवान् शिव का मन्त्र** है। अपने **जन्म-दिवस** के शुभ अवसर पर, आप उक्त मन्त्र का **एक लाख** अथवा कम-से-कम **पचास हजार 'जप'** करें। फिर **'हवन'** कर, ब्राह्मण, दरिद्र-नारायण, वटुक को भोजनादि दीजिए। आगे **एक माला नित्य-प्रति 'जप'** कर अपने **'इष्ट-देव'** या **'गुरु-देव'** को अर्पित किया करें। इससे आपको दीर्घ आयु की प्राप्ति होगी तथा आप सुख-शान्ति से जीवन-यापन करने में समर्थ होंगे।

—ब्रह्म-लीन स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

***

[८]

परीक्षा में सफलता, स्मरण-शक्ति-वर्द्धन प्रयोग

ॐ एक-दन्त महा-बुद्धिः, सर्व-सौभाग्य-दायकः।
सर्व-सिद्धि-करो देवो, गौरी-पुत्र विनायकः॥

१. इस **'मन्त्र'** का जप **'परीक्षा'** आरम्भ होने के १५ दिन पहले जो बुधवार पड़े, उस दिन से आरम्भ करे तथा **'परीक्षा'** का परिणाम निकलने तक नियमित करे।

२. नित्य स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहनकर, **'कुश'** या **'कम्बल'** के आसन पर पूर्वाभिमुख बैठे। सम्मुख स्थित **भगवान् गणेश जी** के **'चित्र'** या **'मूर्ति'** में पहले **'आवाहन'** करे—

आगच्छ देव-देवेश! तेजो-राशे गण-पते! क्रियमाणां मया पूजां, गृहाण सुर-सत्तम!
॥ श्रीमद्-गणपति-देवं आवाहयामि ॥

अर्थात् हे देवताओं के ईश्वर! तेज-सम्पन्न हे संसार के स्वामिन्! हे देवोत्तम, आइए, मेरे द्वारा की जानेवाली पूजा को स्वीकार करिए—**मैं भगवान् श्रीगणेश का आवाहन करता हूँ।**

३. फिर **भगवान् गणेश** का पीले पुष्प, अक्षत, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य (लड्डू), दक्षिणा आदि से पूजन करे और दो अगरबत्ती जलाकर उपर्युक्त **'मन्त्र'** का **१०८ बार 'जप'** करे। **'जप'** के समय बाँएँ हाथ की तर्जनी अँगुली के अग्र-भाग (नख के सामनेवाला भाग) तथा अँगूठे के अग्र-भाग को मिलाए, हाथ को घुटने के ऊपर रक्खे तथा अँगुलियों का मुख ऊपर की ओर करे। दाहिने हाथ द्वारा **'कर-माला'** या **'रुद्राक्ष-माला'** में जप करे।

४. परीक्षा-भवन में जब प्रश्न-पत्र मिले, तब प्रश्न-पत्र पढ़ने के पहले और प्रश्नों का उत्तर लिखने से पूर्व, **भगवान् गणेश का ध्यान** कर पाँच बार मन-ही-मन उपर्युक्त '**मन्त्र**' जपे।

***

[९]

अनावृष्टि-निवारक प्रयोग

वृष्टि अर्थात् वर्षा के न होने से सूखा पड़ता है और देश अकाल के सङ्कट में फँस जाता है। इस विपत्ति से बचने के लिए तीन 'आध्यात्मिक प्रयोग' यहाँ प्रस्तुत हैं—

१. पहले '**स्वस्ति-वाचन**' (देखिए, पुस्तक 'दीपावली की पूजा-विधि', पृ० २४) करे। फिर अच्छी वर्षा हेतु **पञ्च-देवताओं** (१ गणेश, २ सूर्य, ३ शक्ति, ४ शिव और ५ विष्णु) के पूजन सहित **भगवान् वरुण** के पूजन हेतु '**सङ्कल्प**' करे। '**सङ्कल्प**' के बाद क्रम से **भगवान् गणेश, सूर्य, शक्ति, शिव** और **विष्णु** का पञ्चोपचारों से पूजन करे। पञ्च-देवताओं के पूजन के बाद **भगवान् श्री वरुणदेव का ध्यान** करे। यथा—

ॐ पुष्करावर्तकैर्मेघैः, प्लावयन्तं वसुन्धराम्। विद्युत्-गर्जित-सन्नद्ध-तोयात्मने नमाम्यहम्॥
यस्य केशेषु जीमूतो, नद्यः सर्वांग-सन्धिषु। कुक्षौ समुद्राश्चत्वारस्तस्मै तोयात्मने नमः॥

अर्थात् घूम-घूम कर आनेवाले पुष्कर मेघों द्वारा धरती को जल से आप्लावित करनेवाले, बिजली की कड़क द्वारा जल-वर्षा के लिए तत्पर रहनेवाले, जिनके केशों में मेघ और सभी अङ्गों की सन्धियों में नदियाँ विराजमाना हैं, जिनकी कोख में चारों समुद्र अवस्थित हैं, उन जल-तत्त्व के अधिष्ठाता वरुण देव को नमस्कार।

उक्त ध्यान को पढ़कर, अपने शिर पर पुष्प चढ़ाकर मानसोपचारों से पूजा करे। फिर **अर्घ्य-स्थापन** कर, पुनः **भगवान् श्रीवरुण का ध्यान** करते हुए उनका **आवाहन** करे तथा यथा-शक्ति उनका **पूजन** करे।

इसके बाद एकाग्र-चित्त होकर, अच्छी वर्षा के लिए, दृढ़ निश्चय के साथ, किसी नदी या उसके अभाव में किसी जलाशय (तालाब) के पास जाकर, '**हुं श्रीं हूं**' इस मन्त्र का जप करते हुए उसमें प्रवेश करे। नाभि तक गहरे जल में खड़े होकर निम्न विनियोग पढ़े—**ॐ अस्य मन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, श्रीवरुणः देवता, एतद् राज्यमभिवाप्य सु-वृष्ट्यर्थं जपे विनियोगः।**

इसके बाद '**ॐ वं**' मन्त्र का '**आठ हजार**' जप करे।

२. **ॐ हूँ ह्रीं क्षं क्षां, क्षिं क्षीं, क्षु क्षूं, क्षें क्षैं, क्षों क्षौं, क्षं क्षः, हुं फट् ठं ठः।**

३. **ॐ ह्रीं क्षें क्षिं क्षीं, क्षुं क्षूं, क्षें क्षैं, क्षों क्षौं, क्षः हूं।**

उक्त दोनों मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र को जलाशय के मध्य में पूर्व-मुख खड़े होकर जपे।

—श्रीयुत घोरानन्दनाथ, १०८ चकराघाट, सागर

***

[१०]

अभया-अपराजिता

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि, अभयामपराजिताम्। या शक्तिर्मामकी वत्स! रजो-गुण-मयी ततः॥
सर्व-शक्ति-मयी साक्षात्, सर्व-मन्त्र-मयी तथा। या स्मृता पूजिता जप्ता, न्यस्ता कर्मणि योजिता॥
सर्व-काम-दुघा वत्स! शृणु चैतां ब्रवीमि ते।

ॐ नमस्ते त्वभये, अनवद्ये, अनघे, अजिते! असिते, अमृते, अपराजिते, पठति सिद्धे! स्मरति विद्ये, वरानने, ध्रुवे, अरुन्धति! सावित्रि, उमे, गायत्रि, जात-वेदसे, मानस्तोके! सरस्वति, धरणि, धारणि, सौदामिनि, दिते! वनिते, गौरि, गान्धारि, मातङ्गि, कृष्ण, यशोदे! सत्य-वादिनि, कालि, कपालिनि, रौद्रे! सर्वोपचय-कर-स्थल-गतं, जल-गतं, अन्तरिक्ष-गतं। मां रक्ष-रक्ष सर्व-भूतोपद्रवेभ्यः स्वाहा।

॥ इत्येषां कथितां विद्यां अभयाऽपराजिताम् ॥

॥ फल-श्रुति ॥

एतस्या स्मृति-मात्रेण, भयं क्वापि न जायते। नोपसर्गो न रोगांश्च, न व्याधो नापि तस्कराः॥
न राजानोपसर्गांश्च, न द्विपा नापि शत्रवः। यक्ष-राक्षस-वैताला, शाकिन्यो न च ग्रहाः॥
नाग्नेर्भयं न वाता नान्न समुद्रा न वै विषात्। कार्मणे वा शत्रु-कृतं, वशीकरणमेव च॥
उच्चाटनं स्तम्भनं वा, विद्वेषणमथापि वा। न किञ्चित् प्रभवे तत्र, त्रयं चैषा वर्तते मया॥
पठेत् वा यदि वै रात्रौ, पुस्तके वा मुखेऽथवा। हृदि वा द्वार-देशे वा, वर्तते निर्भयः पुमान्॥
हृदये विन्यसेच्चैनां, ध्यायेद् देवीं चतुर्भुजाम्। रक्त-माल्याम्बर-धरां, पद्म-राग-सम-प्रभाम्॥
पाशांकुशाभय-वरैरलंकृत-चतुर्भुजाम्। साधकेभ्यः प्रयच्छन्ति, रत्न-स्वर्णादिकामपि॥
नातः पर-तरं किञ्चित्, वशीकरणमुत्तमम्। रक्षणं पावनं वापि, नात्र कार्या विचारणा॥
प्रातः कुमारिका पूज्या, वाद्यैराभरणैरपि। उभयं वाचनीयास्तास्तत्-प्रीता प्रीतये तु सा॥
सुदर्शन-वेदे चास्या, पौरश्चरणिको विधिः।

॥ इति अभया-अपराजिता ॥

'अभय अपराजिता' के उक्त **मन्त्र** का स्मरण करने मात्र से **सभी प्रकार के भयों का निवारण** होता है। **रोगों से रक्षा** होती है और चोर या शासक—कोई भी किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकते। यही नहीं, भूत-प्रेत एवं ग्रहों से भी स्मरण-कर्ता की रक्षा होती है। विशेष ध्यान देने की बात यह है कि **'मन्त्र'** को स्मरण करने के पूर्व **चतुर्भुजा भगवती अभया अपराजिता** का ध्यान कर ले—वे **रक्त-माल्याम्बर-धरा, पद्म-राग-सम-प्रभा** हैं और हाथों में **पाश, अंकुश** तथा **अभय, वर-मुद्रा** धारण किए हैं। इस प्रकार ध्यान कर, उनका मानसोपचारों से पूजन करे। तदनन्तर **'ॐ नमस्ते त्वभये'** से लेकर **'सर्व-भूतोपद्रवेभ्यः स्वाहा'** तक **मन्त्र** का यथा-शक्ति जप प्रति-दिन प्रातः, सायं एवं रात्रि में किया करे। साथ ही, यथा-सुविधा प्रातः-काल **'कुमारी-पूजन'** भी करता रहे। इस प्रकार नियमित रूप से साधना करनेवाला सब प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न होता है।

—सम्पादक

[११]

अभीष्ट फल-दायक सदा-शिव-कवच

भगवान् शिव का प्रस्तुत कल्याणकारी कवच अत्यन्त छोटा है और प्रायः अनुभूत है। आशा है, भक्त-जन इसका प्रातः-काल **नित्य-पाठ** कर इससे लाभ उठाएँगे। इस '**कवच**' के पाठ से **सभी कामनाओं की पूर्ति** एवं सर्व प्रकार से रक्षा होती है।

—सम्पादक

॥ श्रीदेवी उवाच ॥

भगवान् देव-देवेश! सर्वाम्नाय-प्रपूजित! सर्वं मे कथितं देव! कवचं न प्रकाशितम्॥१
प्रासादाख्यस्य मन्त्रस्य, कवचं मे प्रकाशय। सर्व-रक्षा-करं देव! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति॥२

॥ श्री भगवानुवाच ॥

विनियोग—ॐ अस्य प्रासाद-मन्त्र-कवचस्य श्रीवाम-देव ऋषिः। पंक्तिश्छन्दः। सदा-शिवः देवता। सकलाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीवाम-देव-ऋषये नमः शिरसि। पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे। सदा-शिव-देवाय नमः हृदि। सकलाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

॥ मूल-पाठ ॥

शिरो मे सर्वदा पातु, प्रासादाख्यः सदा-शिवः। षडक्षर-स्वरूपो मे, वदनं तु महेश्वरः॥१
पञ्चाक्षरात्मा भगवान्, भुजौ मे परि-रक्षतु। मृत्युञ्जयस्त्रि-बीजात्मा, आस्यं रक्षतु मे सदा॥२
वट-मूलं समासीनो, दक्षिणामूर्तिरव्ययः। सदा मां सर्वतः पातु, षट्-त्रिंशार्ण-स्वरूप-धृक्॥३
द्वा-विंशार्णात्मको रुद्रो, दक्षिणः परि-रक्षतु। त्रि-वर्णात्मा नील-कण्ठः, कण्ठं रक्षतु सर्वदा॥४
चिन्ता-मणिर्बीज-रूपो, ह्यर्द्ध-नारीश्वरो हरः। सदा रक्षतु मे गुह्यं, सर्व-सम्पत्-प्रदायकः॥५
एकाक्षर-स्वरूपात्मा, कूट-व्यापी महेश्वरः। मार्तण्ड-भैरवो नित्यं, पादौ मे परि-रक्षतु॥६
तुम्बुराख्यो महा-बीज - स्वरूपस्त्रिपुरान्तकः। सदा मां रण-भूमौ च, रक्षतु त्रि-दशाधिपः॥७
ऊर्ध्वमूर्द्धानमीशानो, मम रक्षतु सर्वदा। दक्षिणास्यं तत्-पुरुषः, पायान्मे गिरि-नायकः॥८
अघोराख्यो महा-देवः, पूर्वास्यं परि-रक्षतु। वाम-देवः पश्चिमास्यं, सदा मे परि-रक्षतु॥९
उत्तरास्यं सदा पातु, सद्योजात-स्वरूप-धृक्। इत्थं रक्षा-करं देवि! कवचं देव-दुर्लभम्॥१०

॥ फल-श्रुति ॥

प्रातः-काले पठेद् यस्तु, सोऽभीष्टं फलमाप्नुयात्। पूजा-काले पठेद् यस्तु, कवचं साधकोत्तमः॥१
कीर्ति-श्री-कान्ति-मेधायुः, सहितो भवति ध्रुवम्। तव स्नेहान्महा-देवि! कथितं कवचं शुभम्॥२

॥ इति भैरव-तन्त्रे सदा-शिव-कवचं समाप्तम् ॥

❋❋❋

श्रद्धा-सुमन

'कुल-भूषण' आनन्द-नाथ, गुरु जी की महती शक्ति-स्वरूपा!
देवि-मूर्त्ति तुम, तेज-पुञ्ज तुम, विशद शिष्य-मण्डल की माता!
शुद्ध तन्त्र-पूजन-पद्धति की, तुम मर्यादा-पूर्ण विज्ञ तुम।
सुर-सरि तुम वात्सल्य-स्नेह की, माता-श्री स-शरीर सिद्धि तुम!
सूक्ष्म शरीर प्राप्त कर माँ, मम 'गुरु' से एकाकार हो गईं!
वे वास्तविक 'अर्द्ध-नारीश्वर' अब, तुम उनमें लीन हो गईं!
भौतिक चरणों का स्पर्श-फल — पर, आशीष-प्रसाद खो गया!
दीर्घ-काल का 'मातृ-हीन' मैं — फिर से 'मातृ-विहीन' हो गया!
हम 'भौतिक' संसारी प्राणी — अतः हमारा हृदय व्यथित है!
अश्रु-प्रवाल-पूर्ण नयनों से — 'श्रद्धा-सुमन' तुम्हें अर्पित हैं॥

—श्रीअमर सिंह 'अमर'
तिलक मार्ग, बाँस मण्डी, प्रयाग

❋

जय देवि! उमे! अभयं कुरु माम्, सुख-शान्ति-प्रदायिनि! हे वर-दे!
गुरु-अङ्क-समाधि-गते! विमले! पद-कञ्ज-समाश्रित-सिद्धि-प्रदे!॥
जय देवि! उमे!...॥१॥

श्रीदेवी-दत्त-पद-सेविके! जय रमादत्त-कुल-नायिके!
कुल-सुकुल-प्रतिष्ठा-कारिके! कल्याण-सुधा-सम्वाहिके!॥
जय देवि! उमे!...॥२॥

कुल-धर्म-परायणि! श्रीकमले! कुल-शिष्य-विमुक्ति-महा-फल-दे!
गुरु-अङ्क-समाधि-गते! विमले! पद-कञ्ज-समाश्रित-सिद्धि-प्रदे!॥
जय देवि! उमे!...॥३॥

निज-वत्स-सदा-सन्मार्ग-प्रदे! गायत्रि! तारिणि! श्रीदुर्गे!
श्री-कुलानन्द-मयि! मातर्हे! निखिलामर-शक्ति-महा-भर्गे!॥
जय देवि! उमे!...॥४॥

लीला-सम्पन्न-कृते वाणि! श्रीसती-शिवे! सत्वर-जय-दे!
गुरु-अङ्क-समाधि-गते! विमले! पद-कञ्ज-समाश्रित-सिद्धि-प्रदे!॥
जय देवि! उमे!...॥५॥

—श्री विजय वत्स
दानापुर, पटना (बिहार)

रजि० सं० ३२९८१/५७

कुलानन्द-मयी देव्यम्बा श्रीमती उमादेवी शुक्ला अविस्मरणीय छवियाँ

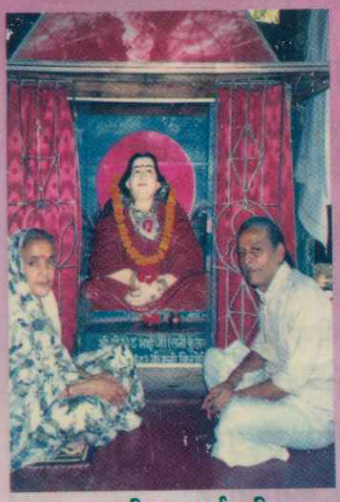

पूजनीया माई जी
की मूर्ति के सामने

'श्रीचण्डी'-धाम में प्रज्वलित
होलिका की परिक्रमा करती हुई

श्रीकेदारनाथ-धाम के
सम्मुख

दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध
मन्दिर के सम्मुख

श्रीछिन्नमस्ता मन्दिर,
रामनगर (काशी)
के प्रवेश-द्वार के सामने

'शाक्त सम्मेलन', पटना (बिहार) में
'दीप' प्रज्वलन करते हुए

सुदूर कन्या कुमारी में

'शाक्त सम्मेलन', पटना की गोष्ठी में

पं० देवीदत्त शुक्ल
शताब्दी समारोह में

प्रकाशक : श्रीऋतशील शर्मा, श्रीचण्डी-धाम,
प्रयाग-६ ☎ ०५३२-२५०२७८३

मुद्रक : पूर्वी ऑफसेट, प्रयाग (०५३२-२४१७८९)